www.kahaar.in

ISSN (p): 2394-3912
ISSN (e): 2395-9369
त्रैमासिक 10 (4) अक्टूबर – दिसम्बर, 2023
प्रिंट कापी : रूपये 50/-
ऑनलाइन : रूपये 25/-
Technical Articles are Peer Reviewed

कहार

जन विज्ञान की बहुभाषाई पत्रिका

KAHAAR

A multilingual magazine for common people

प्रकाशक
प्रोफेसर एच्.एस. श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसाइटी, लखनऊ
(www.phssfoundation.org)
सह-प्रकाशक
पृथ्वीपुर अभ्युदय समिति, लखनऊ (www.prithvipur.org)
बचपन क्रिएशन्स, लखनऊ(www.bachpancreations.com)
सोसायटी फॉर इन्वायरमेन्ट एण्ड पब्लिक हेल्थ (सेफ), लखनऊ

PrakashVirSingh
PHOTOGRAPHY

श्री अन्न की उपज आज की आवश्यकता–प्रो.अश्विनी मिश्र

अन्न की उपज आज की आवश्यकता: प्रो0 अश्विनी मिश्र

श्री अन्न की उपज आज की आवश्यकता: प्रो0 अश्विनी मिश्र

पूर्वांचल राज्य ब्यूरो गोरखपुर,(ब्यूरो प्रभारी वीपीमिश्र की रिपोर्ट)

गोरखपुर। डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज, एवं पी.एच.एस.एस. फाउन्डेशन, लखनऊ के संयुक्त तत्वाधान में युवाओं के लिये कृषि में रोजगार के अवसर विषय पर एक दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया एवं एम.ओ.यू. पर हस्ताक्षर भी किया गया। एम.ओ.यू. पर हस्ताक्षर पी.एच.एस.एस. फाउन्डेशन, लखनऊ के सचिव प्रो. राना प्रताप सिंह व प्राचार्य प्रो. शैल पांडे ने किये। संस्था के प्रशासनिक अधिकारी श्री कृष्णानन्द के साथ क्षेत्रीय उच्च शिक्षा अधिकारी प्रो. अश्विनी कुमार मिश्रा, दी.द.उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय के वनस्पति विज्ञान के विभागाध्यक्ष प्रो. अनिल द्विवेदी करार के साक्षी बने। कृषि में रोजगार के अवसर पर अपने विचार व्यक्त करते हुये क्षेत्रीय उच्च शिक्षा अधिकारी ने कहा की बहु फसली पद्धति भारतीय परम्परागत कृषि में रोजगार के अनेक अवसर प्रदान करता है। उन्होने कम जल में उच्च पोषक तत्वों से भरपूर मोटे अनाज जिसे श्री अन्न भी कहते हैं, पर विस्तार से बताया। कृषि क्षेत्र असीम सम्भावनाओं से भरा हुआ है एवं युवाओं की रूचि भी इस क्षेत्र में बढ़ रही है। इस अवसर पर पी.एच.एस.एस. फाउन्डेशन के सचिव व डॉ. भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ से आये प्रो. राना प्रताप सिंह ने बताया कि वर्तमान में पारिस्थितिकी तंत्र के अनुकूल पोषित भोजन की आवश्यकता है। इस हेतु आवश्यक है कि हमारी कृषि जैव उर्वरा आधारित हो जिससे पर्यावरण भी सुरक्षित रहे।

गोरखपुर | बृहस्पतिवार • 19 अक्टूबर • 2023

गोरखपुर

राष्ट्रीय सहारा | www.rashtriyasahara.com

डीएवीपीजी ने किया पीएचएसएस फाउन्डेशन के साथ एमओयू

गोरखपुर(एसएनबी)। डीएवी पीजी कॉलेज, गोरखपुर एवं पीएचएसएस फाउन्डेशन लखनऊ के बीच बुधवार को एक एमओयू साइन किया गया। साथ ही संयुक्त तत्वावधान में युवाओं के लिये कृषि में रोजगार के अवसर विषय पर एक दिवसीय कार्यशाला का भी आयोजित हुवी।

एमओयू पर हस्ताक्षर पीएचएसएस फाउन्डेशन लखनऊ के सचिव प्रो. राना प्रताप सिंह व प्राचार्य प्रो. शैल पांडे ने किये। संस्था के प्रशासनिक अधिकारी कृष्णानन्द के साथ क्षेत्रीय उच्च शिक्षा अधिकारी प्रो. अश्विनी कुमार मिश्रा, दीदउ गोरखपुर विश्वविद्यालय के वनस्पति विज्ञान के विभागाध्यक्ष प्रो. अनिल द्विवेदी करार के साक्षी बने।

कृषि में रोजगार के अवसर पर कार्यशाला भी आयोजित हुयी

श्रीअन्न की उपज आज की आवश्यकता: प्रो. अश्विनी मिश्र

कृषि में रोजगार के अवसर पर अपने विचार व्यक्त करते हुये क्षेत्रीय उच्च शिक्षा अधिकारी ने कहा की बहु फसली पद्धति भारतीय परम्परागत कृषि में रोजगार के अनेक अवसर प्रदान करता है। उन्होंने कम जल में उच्च पोषक तत्वों से भरपूर मोटे अनाज श्री अन्न पर विस्तार से बताया। पीएचएसएस फाउन्डेशन के सचिव व डॉ. भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय लखनऊ से आये प्रो. राना प्रताप सिंह ने बताया कि वर्तमान में पारिस्थितिकी तंत्र के अनुकूल पोषित भोजन की आवश्यकता है। उन्होंने संस्था द्वारा किये जा रहे कार्यों एवं कृषि के क्षेत्र में नवाचार एवं उन्नत प्रौद्योगिकी के विषय में छात्र-छात्राओं से विस्तार पूर्वक चर्चा की।

प्रो. अनिल द्विवेदी ने कृषि में उच्च गुणवत्ता वाले पौधों के उत्पादन पर प्रकाश डाला। गोरखपुर इन्वायरमेंटल एक्शन ग्रुप के पर्यावरण विशेषज्ञ अजय सिंह ने जलवायु परिवर्तन का कृषि क्षेत्र पर होने वाले प्रभाव को विस्तार से बताया। सुमन कुमार सिन्हा ने कम लागत से अधिक उत्पादन हेतु समन्वित खेती पर जोर दिया। साथ ही डॉ. एसके प्रभुजी ने मछली पालन में बेहतर रोजगार के अवसर पर व्याख्यान दिया।

कार्यशाला में मुख्य रूप से शिक्षक डा. संजय कुमार पाण्डेय, डा. स्नेहलता त्रिपाठी, संजय मिश्रा, कु. रक्षा गुप्ता, प्रो. अवनीश, डा. वीना कुमारी उपस्थित रहे। इस कार्यशाला में तकरीबन 200 छात्र/छात्राओं ने प्रतिभाग किया।

कहार

जन विज्ञान की बहुभाषाई पत्रिका

त्रैमासिक 10 (4) अक्टूबर – दिसम्बर, 2023

प्रधान संपादक
प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह, लखनऊ

सम्पादक
प्रो. गोविन्द जी पाण्डेय
डॉ. संजय द्विवेदी

कार्यकारी सम्पादक
श्री कृष्णानन्द सिंह, लखनऊ

सह-सम्पादक
डॉ. नागेन्द्र कुमार सिंह, वाराणसी
डॉ. सीमा मिश्रा, गोरखपुर
श्री आकाश मौर्या, बाराबंकी
डॉ. पीयूष गोयल, नई दिल्ली
डॉ. रूद्र प्रताप सिंह, मऊ
डॉ. धीरेन्द्र पाण्डेय, लखनऊ

सम्पादक मण्डल
डॉ. राम सनेही द्विवेदी
डॉ. वेदप्रकाश पाण्डेय, बालापार, गोरखपुर
डॉ. रामचेत चौधरी, गोरखपुर
डॉ. मधु भारद्वाज, लखनऊ।
प्रोफेसर राकेश सिंह सेंगर, मेरठ
डॉ. सुमन कुमार सिन्हा, गोरखपुर
डॉ. विष्णु प्रताप सिंह, लखनऊ
प्रोफेसर रामचन्द्र, लखनऊ
डॉ. अनुज कुमार सक्सेना, सीतापुर
डॉ. अर्चना (सेंगर) सिंह, कनिटकट (यूएस.ए.)

सलाहकार मण्डल
प्रोफेसर सरोज कान्त बारिक, लखनऊ
प्रोफेसर प्रफुल्ल वी. साने, जलगाँव
प्रोफेसर रामदेव शुक्ल, गोरखपुर
प्रोफेसर शशि भूषण अग्रवाल, वाराणसी
डॉ. एस.सी. शर्मा, लखनऊ
प्रोफेसर सूर्यकान्त, लखनऊ
प्रो. अरूण पाण्डेय, भोपाल
डॉ. रूद्रदेव त्रिपाठी, लखनऊ
प्रोफेसर रणवीर दहिया, रोहतक
प्रोफेसर एन. रघुराम, दिल्ली
डॉ. सुधा वशिष्ठ, लखनऊ
श्री आकाश वर्मा, लखनऊ
इ. रविन्द्र कुमार श्रीवास्तव, लखनऊ
डॉ. मनोज कुमार पटैरिया, नई दिल्ली
डॉ. सिराज वजीह, गोरखपुर
प्रो. उपेन्द्र नाथ द्विवेदी, लखनऊ
प्रोफेसर मालविका श्रीवास्तव, गोरखपुर
डॉ. निहारिका शंकर, नोएडा
श्री संजय सिंह, झांसी
श्री उपेन्द्र प्रताप राव, दुदही
इं. तरूण सेंगर, इरविन अमेरिका
डॉ. पूनम सेंगर, चण्डीगढ़
श्री अविनाश जैसवाल, दुदही

आवरण फोटो
श्री प्रकाशवीर सिंह, लखनऊ
प्रबन्ध-सम्पादक
श्री अंचल जैन, लखनऊ
सोशल मीडिया
श्री रंजीत शर्मा, लखनऊ
श्री योगेन्द्र प्रताप सिंह, लखनऊ

संपादकीय पता
04, पहली मंजिल, एल्डिको एक्सप्रेस प्लाजा, शहीद पथ उतरेठिया, रायबरेली रोड, लखनऊ–226 025 भारत
ई–मेल : phssoffice@gmail.com/dr.ranapratap59@gmail.com
वेबसाइट : www.kahaar.in/www.kahaar.org (web portal)
https://www.facebook/kahaarmagazine.com

Technical Articles are Peer Reviwed

सहयोग राशि	प्रिंटकापी	ऑनलाइन
एक प्रति	: 50 रूपये	25 रूपये
वार्षिक	: 180 रूपये	80 रूपये

सहयोग राशि 'प्रोफेसर एच.एस. श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसायटीः लखनऊ' के नाम भेजें।
खाता संख्या– 2900101002506, कैनरा बैंक, बी.बी.ए. विश्वविद्यालय, लखनऊ
IFSC Code - CNRB-0002900

घोषणा

लेखकों के विचार से 'कहार' की टीम का सहमत होना जरूरी नहीं। किसी रचना में उल्लेखित तथ्यात्मक भूल के लिए 'कहार' की टीम जिम्मेदार नहीं होगी।

लेखकों के लिए

वैचारिक रचनाओं में आवश्यक संदर्भ भी दें एवं इन संदर्भों का विस्तार रचना के अन्त में प्रस्तुत करें। अंग्रेजी रचनाओं का हिन्दी तथा हिन्दी सहित अन्य भाषाओं की रचनाओं का अंग्रेजी या हिन्दी में सारांश दें। मौलिक रचनाओं के साथ रचना के स्वलिखित, मौलिक एवं अप्रकाशित होने का प्रमाणपत्र दें। लेखक पासपोर्ट साइज फोटो भी भेंजे। रचनाऐं English के Times New Roman (12 Point) और हिन्दी के लिए कृति देव 10 में Word Format (Window 2003) में टाइप करें। तस्वीरें, चित्र, रेखाचित्र आदि PDF Format में भेंजे।

विज्ञापन दाताओं के लिए

विज्ञापन की विषय वस्तु के साथ ही भुगतान 'प्रोफेसर एच.एस. श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसायटी, लखनऊ' के नाम मल्टीसिटी चेक या बैंक ड्राफ्ट द्वारा सम्पादकीय पते पर भेजें। ऑनलाइन पेमेंट उपरोक्त* बैंक खाते में कर सकते है।

रूपये 6000/– पूरा पृष्ठ (सादा) रूपये 4000/– आधा पृष्ठ (सादा)
रूपये 10000/– पूरा पृष्ठ (रंगीन) रूपये 6000/– आधा पृष्ठ (रंगीन)

For Advertisers

Please send payment in form of DD or multicity cheques in favour of 'Professor H.S. Srivastava Foundation for Science and Society' Payable at Lucknow along with subscription forms or Advertisement draft. Online Payment can also be made in the account marked above as*.

Rs. 6000/- Full Page (B/W) Rs. 4000/- Half Page (B/W)
Rs. 10000/- Full Page (Color) Rs. 6000/- Half Page (Color

कहार एक पारम्परिक मनुष्य वाहक के लिए प्राचीन देशज सम्बोधन है। कहार की तरह ही यह पत्रिका जानकारियों एवं लोगों के बीच सेतु बनने की कोशिश कर रही है।

अनुक्रमणिका

क्र०सं०	विषय		पृष्ठ संख्या
01	सम्पादकीय	प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह	01
02	Editorial	Prof. Rana Pratap Singh	02
03	इस अंक में	श्री कृष्णानन्द सिंह	03
04	तेजी से हो रहे शहरीकरण के दौर में वायु प्रदूषण	श्री संदीप कल्याण एवं डॉ. भावना पाठक	04
05	खरीफ की दलहनी फसलों में समन्वित कीट एवं रोग प्रबंधन	डॉ. रुद्र प्रताप सिंह, डॉ. विजय लक्ष्मी राय, डॉ.रणधीर नायक एवं डॉ. डी.के. सिंह	07
06	छोटे और सीमांत किसानों की आजीविका में सुधार के लिए पशुधन आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली	डॉ. सुधांशु शेखर एवं डॉ. शिव मंगल प्रसाद	10
07	एक्वापोनिक्स : पर्यावरण अनुकूल खेती के लिए एक आशाजनक विधि	आदित्य कुमार एवं रविन्द्र कुमार	13
08	Filler-1	Dr. Janaki Ammal	15
09	जुकिनी की खेती : भारत के किसानों के लिए आय बढ़ाने का एक अच्छा विकल्प	डॉ. विनय कुमार	16
10	उर्वरको की पहचान, उत्तम कृषि बलवान	श्री शिवम सिंह1, श्री अंकित तिवारी2, सुश्री ऋचा रघुवंशी3, श्री सतेन्द्र कुमार1 एवं श्री राहुल कुमार वर्मा4	20
11	Filler-2	Dr. Ved Prakash Kamboj	21
12	धारणीय कृषि एवं पर्यावरण केंद्र, लखनऊ	प्रो0 राणा प्रताप सिंह एवं श्री आकाश मार्य	22
13	Agricultural Powerhouse in the World	Ms. Akanksha Singh, Dr. R S Sengar*, Dr. Krishanu & Mr. Khushagra Yadav	25
14	The Dark Side of Social Media: Cyberbullying in India	Dr. Dhirendra Pandey & Mr. Manish Joshi	29

सम्पादकीय

जहरीली साँसों का मौसम

हर वर्ष यही होता है। जब ठंढ का मौसम आने लगता, तो नमी, धूल और प्रदूषकों से लदी-फदी हवा, थोड़ी भारी होकर निचले वातावरण में पैर पसारने लगती। पिछले दशकों में जलवायु परिवर्तन से उपजे वैश्विक ऊष्मीकरण के दंश को झेलती दुनिया परेशान है। अब उद्योग और बाजार के फैलाव से वैश्विक गाँव बने विश्व के तेज आर्थिक विकास की चर्चाओ के बीच पर्यावरण संरक्षण, जल संकट, हरियाली, जैव विविधता, कार्बन तथा नाइट्रोजन फुट प्रिंट, प्राकृतिक खेती और वायु प्रदूषण से होने वाली साँस की बीमारियों एवं मौतों की चर्चा भी होने लगी है। बार -बार होने वाले युद्ध, विध्वंस और हथियारों के बाजार की बहसों के बीच शाँति, विस्थापन, समावेशी विकास और सहजीविता की बातें भी अब चर्चा और विमर्श का हिस्सा बनती रहती हैं। पर समस्याओं के अम्बार पर खड़े विश्व में समाधान की ओर बढ़ने के लिए मात्र इतने बदलाव पर्याप्त नहीं हैं।

यूँ तो हम महसूस कर सकते हैं, कि अब समाज के एक हिस्से का कृत्रिम रसायनों तथा बहुतायत में जीवाश्म ऊर्जा की खपत पर आधारित बड़े बहुराष्ट्रीय कारखानों में बनी वस्तुओं के अधिकतम खपत से आर्थिक विकास के दर्शन से कइयों का मोहभंग हुआ है। बड़ी संख्या में लोग अब प्राकृतिक संसाधनों तथा जैविक रसायनों और गैर पारंपरिक हरित ऊर्जा स्रोतों पर आधारित उत्पादों की तरफदारी करने लगें है। परन्तु अभी भी बड़े पैमाने पर हरित उद्योगों पर आधारित आवश्यक स्थानीय उत्पादन एवं कम खपत - कम कचरा उत्पादन के प्रकृति संगत विकास दर्शन से सम्यक् आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास को भविष्य की विकास प्रणाली की रूप मे स्वीकार करने वाले कम ही हैं। कम ही लोग जानते और उससे भी कम लोग मानते हैं , कि सहभागिता एवं सहजीविता से सुख प्राप्त करना ही प्राकृतिक और मानवीय विकास प्रणाली है। अभी भी बहुत कम लोंगों को भान है, कि एक आनंदमयी मानवीय जीवन के लिये हमें साफ हवा, साफ पानी, विषविहीन भोजन, स्वस्थ शरीर और शान्त मन की जरूरत है, धन दौलत और अपने चारो ओर रखे हुए अनगिनत सामानों की नहीं। कि हम संश्लेषित रसायनों और विषाक्त जलवायु के बीच लंबे समय तक स्वस्थ, सुखी और जीवित नहीं रह सकते। कि हम सोना शरीर में पहन कर चमक तो सकते हैं , उसे खाकर अपनी भूख नहीं मिटा सकते ।

हम मनुष्यों के जिस तरह के आपस में विविध प्रकार के संबंध होते हैं, उसी तरह हमारे संबंध वनस्पतियों, वृक्षों, पक्षियों, पशुओं, पहाड़ें, पानी, धूप, हवा आदि सभी जीवित-अजीवित जीवों और पदार्थों से होते हैं। जिस तरह हमारे मनुष्यवत् संबंध हमारी मंशा और व्यवहार से परिलक्षित होते हैं, और दूसरों को आकर्षित या विकर्षित करते रहते , उसी तरह हमारे मनुष्यतर संबंध भी हमारी नीयत और व्यवहार से ही संचालित होते हैं । मनुष्योतर जीव और अजीव भी उस सकारात्मक तथा नकारात्मक विचारों और ऊर्जा पुंजों से हमारे संबंधों को महसूस करने और उसी के अनुसार प्रतिक्रिया देते हैं ।

हमारे देश में भी अन्य देशों की तरह ही विचारक हैं, सरकारें हैं, विभाग- प्रभाग हैं, कानून हैं, व्यवस्थाएँ हैं, तो वर्ष- दर -वर्ष सर्दियों की हवा इतनी जहरीली क्यों होती जा रही है ? सर्दियाँ आते न आते साँस की बीमारियों से त्रस्त मरीजों की कतारें अस्पतालों की भीड़ में खोने लगती। मौतों का आकड़ बढ़ने लगता। दिल्ली की खराब हवा के लिए सारा तन्त्र पराली जालाने वाले किसानों को कोसने लगता। पटाखों और प्रदूषण के संबंध को जानते हुए भी त्योहारों पर पटाखों की आवाज़ थमने का नाम नहीं लेती । कारखानों की चिमनियों का जहरीला धुआँ और शहरों में मोटर गाड़ियों का रेंगना जाड़ें मे और बढ़ने लगता । सब लोग अपने अलावे दूसरों पर उँगली उठने लगते । सर्दियाँ आ रहीं हैं । फिर से यही सब होने वाला है । आप सब सावधान रहें । दूसरों पर उँगली उठाएँ पर एक बार उँगली अपनी छाती की ओर करके रोज थोड़ी देर मनन करें। सब मिलकर शायद अगले जाड़े की हवा से थोड़ा जहर कम कर सकें। मैं भी इस अभियान में आप सबके साथ हूँ, एक उँगली रोज सुबह अपनी ओर भी करके मनन करने के अभियान में।

राणा प्रताप

(राणा प्रताप सिंह)
www.ranapratap.in

04, पहली मंजिल, एल्डिको एक्सप्रेस प्लाजा, शहीद पथ उतरेठिया, रायबरेली रोड, लखनऊ–226 025
ई–मेलः dr.ranapratap59@gmail.com

Editorial

A Seasion of Toxic Breath and Wet Air

This happens every year. When the cold season starts, the air laden with moisture, dust and pollutants becomes a little heavier and starts spreading in the lower atmosphere. The world, which is suffering with the brunt of global warming due to climate change in the last decades, is warried, Considered as a global village, due to the expansion of industry and market national boundaries are diminishing. Amidst the rapid economic development of the world, environmental protection, water crisis, greenery, biodiversity, carbon and nitrogen foot print, natural respiratory diseases and deaths caused by poisoned food and air pollution are also being discussed frequently. The frequent debates about war, destruction, and arms market, talks about peace, displacement, inclusive development, and symbiosis have also started as a routine in the entire world it. But looking on the crisis of environmental deterioration, wars and conflicts, it is not adequate.

In fact, we can feel that now a part of the society is disillusioned with the philosophy of economic development based on maximum consumption of goods made in big multinational factories based on the consumption of synthetic chemicals and abundant fossil energy. The world is talking to favor products based on natural resources and organic natural substances, as well as the use of non-conventional green energy sources. But there are still very few people who accept the future development system for proper economic, social and cultural development based on green industries on a large scale and the nature compatible development philosophy of essential local production, less consumption and less waste production. Very few people know and even lesser people believe that achieving happiness through participation and symbiosis is the natural and human development system. Still very few people are aware that for a happy human life, we need clean air and clean water. What is needed is non-toxic food, healthy body, and peaceful mind, not wealth and countless things kept around us. That we cannot remain healthy, happy and alive for long amidst synthetic chemicals and toxic climate. That we can shine by wearing gold in our body, but we cannot survive by eating it.

Just as we humans have various types of relationships among ourselves, similarly we have relationships with plants, trees, birds, animals, mountains, water, sunlight, air, etc., all living and non-living substances. Just as our human relationships are reflected by our intentions and behavior, and attract or repel others, similarly our non-human relationships are also governed by our intentions and behavior. "The non-human beings and non-living beings also sense our relationship with those positive and negative thoughts and energy beams and respond accordingly.

In our country, like other countries, there are thinkers, there are governments, there are departments, there are laws, there are systems, then why is the winter air becoming so poisonous year after year. By the time winter arrived, the queues of patients suffering from respiratory diseases started getting lost in the crowd of hospitals. The number of deaths starts increasing. People started cursing the farmers for the bad air of Delhi. The sound of firecrackers never stops during festivals. The poisonous smoke from the chimneys of factories and the creep of motor vehicles in the cities started increasing. Everyone started pointing fingers at others besides themselves. Winters are coming. All this is going to happen again. All of you be careful. Point your finger at others, but point your finger towards your chest and think for a while every day. Together, maybe we can remove a little poison from the air next winter. I am also with you all in this campaign, in the campaign of thinking and pointing one finger towards my self every morning.

Rana Pratap

(Rana Pratap Singh)
www.ranapratap.in

इस अंक मे

कहार के इस अंक मे हम विभिन्न क्षेत्रों पर आलेख प्रकाशित कर रहे है। इस पत्रिका का मुख्य स्वर पर्यावरण संरक्षण और कृषि की धारणीयता के साथ–साथ यह अंक दुनियाँ मे होने वाले नये–नये अन्वेषणों और समाज मे हो रहे बदलाओं को भी रेखांकित कर रहा है। पहले की तरह ही इस अंक मे भी हमारे लेखको ने अपने–अपने क्षेत्रों के महत्वपूर्ण विषयों पर आलेख दिए हैं। जिसे पढ़कर हमारे पाठकों को विज्ञान और कृषि मे हो रहे बदलावों और उससे निपटने के उपायों के साथ–साथ जलवायु परिवर्तन से अपनी कृषि और पर्यावरण को बचाए रखने में इसमे मदद मिलेगी।

इस अंक मे आचार्य राणा प्रताप जी जो की कहार पत्रिका के प्रधान सम्पादक और भीम राव अंबेडकर विश्वविद्यालय के आचार्य है, ने उल्लेख किया हैं कि सर्दियों के मौसम मे वायु प्रदूषण कैसे भयावह रूप ले लेता हैं, जिसकी वजह से बड़े शहरों के लोगों को साँस की अनेक बीमारियाँ होने लगी हैं। इन्होंने चेताया है कि दशकों से जलवायु परिवर्तन से उपजे वैश्विक ऊष्मिकरण और प्रदूषण की जद में धीरे धीरे पूरी दुनिया फसती जा रही हैं। शहर के साथ–साथ अब गाँवों की तरफ भी विकास होने से प्रदूषण फैल रहा है तथा तेजी से हो रहे आर्थिक विकास से पर्यावरण संरक्षण, जल संकट, हरियाली तथा जैव–विविधता के क्षरण की समस्याएं बढ़ती जा रही हैंद्य वायु प्रदूषण से होने वाले सांस की समस्याओं और मौत की अब चर्चाएं होने लगी हैं। इसके बाद गुजरात केन्द्रीय विश्वविद्यालय की प्राध्यापिका प्रोफेसर श्रीमती भावना पाठक ने हमारे देश मे तेजी हो रहे शहरीकरण के वजह से प्रदूषण का स्तर बढ़ रहा है, उसके बारे मे आगाह किया हैं और बताया है कि इस से समस्या से भविष्य मे लोगों को कितनी परेशानी होने वाली हैं, इसलिए समय रहते इसका निदान जरूरी है।

आजमगढ़ कृषि विज्ञान केंद्र के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ० रुद्र प्रताप सिंह जी ने खरीफ की दलहनी फसलों मे मिलने वाले प्रोटीन, पोषक और खनिज पदार्थों के बारे मे बताया है, और उनमे अनेक प्रकार के रोगों और कीट–पतंगों से बचाने के उपाय भी साझा किये हैं। साथ ही साथ उन्होंने कृषि मे हो रहे रासायनिक उर्वरकों को धीरे–धीरे कम करके जैविक खेती को अपनाने की वकालत की है कि रासायनिक उर्वरकों के बजाय जैविक खादें के प्रयोग से कृषि मे अनेक पर्यावरण तथा पोषण से जुड़े लाभ मिल सकें।

कृषि विज्ञान कोडरमा झारखंड और केन्द्रीय चावल अनुसंधान केंद्र हजारीबाग, झारखंड के वैज्ञानिक सुधांशु शेखर और डा० शिव मंगल प्रसाद जी ने बताया है कि भारत मे ज्यादातर किसान लघु और सीमांत किसान हैं और जलवायु परिवर्तन की वजह से उनकी कृषि उपज पर बुरा असर पड़ रहा हैं। उन्होंने समझाया है कि कैसे हम किसानों की आजीविका में सुधार कर सकते है। इस अंक मे पाम आयल कम्पनी इथोपिया के भी अमजद अंसारी ने एवोकेडो नामक फल के लाभ और उपयोग के बारे मे बताया है। डॉ० विनय कुमार जो पंजाब विश्वविद्यालय में कार्यरत हैं, उनके अनुसार जुकनी जो कि एक विदेशी सब्जी हैं, भारत मे उत्पादन के लिए उपयुक्त हैं तथा इसमे अनेक प्रकार की औषधीय क्षमताएं भी हैं। उन्होंने बताया है कि जुकनी में विटामिन, खनिज और फाइबर अधिक मात्रा मे पाया जाता हैं।

मेरठ यूनिवर्सिटी के शोधार्थी शिवम सिंह और उनके अन्य सहकर्मियों ने किसानों द्वारा प्रयोग किये जा रहे उर्वरकों को पहचानने और बाजार मे बिक रहे नकली उर्वकों की बीच के अंतर को समझाया हैं और किसानों से आग्रह किया हैं कि, किसान ध्यान से उर्वरकों की पहचान करके अपने खेतों मे प्रयोग करें, ताकि फसलों को नुकसान से बचाया जा सके और उन्हे लाभ हो सके।

मेरठ यूनिवर्सिटी के आचार्य प्रोफेसर आर एस सेंगर ने कृषि एवं खाद्य क्षेत्र मे हमारे देश की नई उपलब्धियों बारे मे अपने विचार साझा किये हैं और बताया है कि कैसे कोविड–19 के दौर मे और के बाद देश मे आत्मनिर्भरता के साथ–साथ पूरी दुनियाँ को खाद्य आपूर्ति पहुचाई गयी है। आज भारत एक विशाल खाद्य उत्पादक देश बन गया हैं, जहां अनेक तरह के खाद्य पदार्थ देश के भी और बाहर उपयोग के लिए उपलब्ध हैं।

बाबासाहेब भीम राव अंबेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ के सह आचार्य डॉ० धीरेन्द्र पाण्डेय जी ने अपने आलेख में आज के दौर मे देश मे हो रहे सोशल मीडिया से फ्रॉड और आम लोगों के साथ हो रहे धोखे के बारे मे अवगत कराया है। हमें उम्मीद हियाँ की आपको यह अंक पसंद आयेगा। अपनी प्रतिक्रिया से हामे अवगत कराते रहें।

कृष्णानन्द सिंह
कार्यकारी संपादक
kahaarmagazine@gmail-com

पर्यावरण विमर्श

विषय विशेषज्ञ से समीक्षित

तेजी से हो रहे शहरीकरण के दौर में वायु प्रदूषण

❑ श्री संदीप कल्याण एवं डॉ. भावना पाठक

जनसंख्या में लगातार हो रही वृद्धि ने हमें एक ऐसे मुकाम पर पहुंचा दिया है, जहां से पीछे नहीं हटना मुश्किल है। इस बढ़ती आबादी के अपने परिणाम हैं जैसे संसाधनों का अत्यधिक उपयोग, भूमि उपयोग और भूमि आवरण में परिवर्तन, पर्यावरण और जैव विविधता में गिरावट आदि। एक परिभाषित क्षेत्र में जनसंख्या। विश्व बैंक के आंकड़ों के अनुसार, भारत की शहरी आबादी 2021 में 33ः को पार कर गई थी, जिसे 2026 तक पहुंचना था। इसका मतलब है कि भारत की शहरी आबादी बहुत तेजी से बढ़ रही है, शहरीकरण का प्रभाव स्वच्छता, भीड़भाड़ आदि जैसे विभिन्न मुद्दों के साथ आता है लेकिन सबसे महत्वपूर्ण में से एक प्रदूषण है। शहरी ताप द्वीप उन प्रमुख कारकों में से एक है जिनका शहरी वायु गुणवत्ता पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है क्योंकि यह शहरी तापमान की स्थिति को निर्धारित करता है। शहरी वायु गुणवत्ता को परिभाषित करने वाले प्रमुख प्रदूषक पीएम, ग्रीनहाउस गैसें (GHG), एसओएक्स (So_x), एनओएक्स (No_x),आदि हैं, जो वाहनों के आवागमन, सतह के गर्म होने, एरोसोल, खुली हवा में जलने और छोटे उद्योगों आदि के कारण होते हैं, एवं UHI परिघटना को भी प्राप्त करते हैं। लॉकडाउन और प्री–लॉकडाउन अवधि के लिए किए गए तुलनात्मक अध्ययन से भी यह स्पष्ट होता है। इस पेपर में तेजी से बढ़ते शहरीकरण से हवा की गुणवत्ता कैसे निर्धारित होती है, इसकी समझ अति आवश्यक है और यह भी सुझाव देता है कि हम स्थायी और प्रभावी नीतिगत सुधारों को लागू करके इस तरह के मुद्दों को कैसे दूर कर सकते हैं और अनुसंधान कैसे कुशलता से योगदान दे सकता है।

1. परिचय

पिछले कुछ दशकों में आबादी के समूह ने शहरीकरण में भारी बदलाव किया है और इसे 21वीं सदी की सबसे परिवर्तनकारी प्रवृत्ति बना दिया है। ष्शहरीकरण असतत क्षेत्रों में मानव आबादी की एकाग्रता को संदर्भित करता है। यह एकाग्रता आवासीय, वाणिज्यिक, औद्योगिक और परिवहन उद्देश्यों के लिए भूमि के परिवर्तन की ओर ले जाती है। इसमें घनी आबादी वाले केंद्र, साथ ही साथ उनके आस–पास के पेरी–शहरी या उपनगरीय किनारे शामिल हो सकते हैं। शहरीकरण एक तीव्र भूमि–उपयोग परिवर्तन प्रक्रिया है जो शहरी संरचना के आधार पर विभिन्न प्रतिरूप उत्पन्न करती है। शहरीकरण के तीन चरण हैं क्योंकि प्रारंभिक चरण में कृषि गतिविधियों और बिखरी हुई बस्तियों का प्रभुत्व है, चरण दो को त्वरण चरण के रूप में जाना जाता है जहां अर्थव्यवस्था का पुनर्गठन होता है, तीसरे चरण को टर्मिनल चरण के रूप में जाना जाता है जिसमें कुल जनसंख्या का शहरी आबादी >75% से अधिक हो जाती है।

भारत में, एक शहरी क्षेत्र या तो एक अधिसूचित क्षेत्र है जैसे कि नगर पालिका, निगम शहरीकरण कुछ सकारात्मक चीजों के साथ आता है जैसे नौकरी के अवसर, आधुनिक जीवन शैली, जीवनयापन में आसानी, बुनियादी ढांचा और परिवहन आदि लेकिन नकारात्मक प्रभाव बदतर हैं और वैश्विक स्तर पर पारिस्थितिकी तंत्र की विशेषताओं को बदलने में सक्षम हैं।

ग्रामीण आबादी पहले ही बढ़ना बंद कर चुकी है और 2009 के बाद से एक घटती प्रवृत्ति देखी जा सकती है जिसका अर्थ है कि शहरी आबादी बहुत तेजी से बढ़ रही है। 2021 में विश्व बैंक के अनुसार कुल वैश्विक आबादी का लगभग 57ः शहरी इलाकों में रहता है जो (संयुक्त राष्ट्र) के अनुसार 2050 तक 68% तक पहुंचने की संभावना है। 2026 में भारत की शहरी आबादी में 36% की वृद्धि होने की संभावना है, लेकिन फिर से विश्व बैंक के अनुसार जनसंख्या पहले ही 2021 में 34% को पार कर चुकी है, जो दर्शाता है कि भारत की शहरी आबादी बहुत अधिक दर से बढ़ रही है। और 2050 तक कुल आबादी का 50% शहरी क्षेत्रों में आ जायेगा। उच्च शहरी विकास और जनसंख्या वाले राज्य तमिलनाडु (48.4ः), केरल (47.7ः), महाराष्ट्र (45.2ः) और गुजरात (42.6ः) हैं। इन राज्यों में 2011 में भारत की कुल शहरी आबादी का एक तिहाई हिस्सा रहता है। भारत की 75ः से अधिक शहरी आबादी केवल 12 प्रमुख शहरों के पास है। 2011 में दस लाख या उससे अधिक की आबादी वाले 53 शहर थे जो 2031 तक बढ़कर 87 हो जाएंगे।

शहरीकरण एक सतत प्रक्रिया है जिसमें औद्योगिक, आवासीय और वाणिज्यिक उद्देश्यों के लिए एक प्रकार की भूमि का दूसरे प्रकार में परिवर्तन, परिवर्तन और स्थानांतरण होता है। भूमि के इस परिवर्तन की प्रवृत्ति को समझना बहुत महत्वपूर्ण और समय की आवश्यकता है क्योंकि हम इसके साथ आने वाले बाद के परिणामों को दूर करने में सक्षम हो सकते हैं। यह कुछ प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभावों के साथ आता है जो नियमित पर्यावरणीय और जलवायु प्रक्रियाओं में बाधा डालने के लिए पर्याप्त हैं और मानव के साथ–साथ पर्यावरणीय स्वास्थ्य के लिए भी खतरा हैं। तेजी से शहरीकरण भी जलवायु परिवर्तन को बढ़ावा दे रहा है और ठंडे या गर्म द्वीप प्रभाव के परिणामस्वरूप इस क्षेत्र के मानव स्वास्थ्य और सामाजिक–अर्थशास्त्र को प्रभावित कर रहा है।

2. शहरीकरण के प्रभाव

शहरीकरण के नेतृत्व वाले शहरी फैलाव का पर्यावरण पर व्यापक और दीर्घकालिक प्रभाव पड़ता है और मौसम और जलवायु परिस्थितियों के प्रति भेद्यता बढ़ जाती है। प्रभाव बिगड़ रहे हैं जब अर्ध–शहरी या ग्रामीण क्षेत्र प्रभावित होते हैं और वे अनावश्यक रूप से कीमत वहन करते हैं। परिवर्तित पारिस्थितिक तंत्र संरचना से मिट्टी, पानी, वायु की गुणवत्ता और जैव विविधता का क्षरण होगा। इनका–विविधता प्रत्यक्ष पर्यावरणीय कारकों (जलवायु परिवर्तन,

पर्यावरण और संधारणीय विकास संस्थान, गुजरात केंद्रीय विश्वविद्यालय, गांधीनगर, 382030 गुजरात
ई–मेलः bhawana-pathak@cug-ac-in

भूमि आवरण परिवर्तन, नाइट्रोजन जमाव, शहरीकरण) और अप्रत्यक्ष (सामाजिक–आर्थिक, जनसंख्या, प्रौद्योगिकी–विकास, मानव व्यवहार और नीतियां) से प्रभावित होती हैं लेकिन शहरीकरण एक है प्रमुख कारक जिनका महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है और भविष्य के परिवर्तन की भयावहता को परिभाषित करता है।

इसका प्रभाव प्राकृतिक इकाइयों पर भी पड़ेगा जैसे कि फसली भूमि, जल निकाय, कृषि भूमि और वन आवरण का नुकसान। यह पाया गया है कि भारत में तेजी से शहरीकरण जैव विविधता, मिट्टी के क्षरण, जैव भू–रासायनिक और जल विज्ञान चक्र और भूमि उपयोग और भूमि कवर (एलयूएलसी) को गंभीर रूप से प्रभावित करते है। शहरीकरण वजह से ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में वृद्धि, संसाधनों का अत्यधिक दोहन, बाढ़ का अधिक जोखिम, सूखा और अन्य पर्यावरणीय आपदाओं जैसी कुछ चुनौतियाँ आती है, विशेष रूप से उन शहरों में जहाँ दिल्ली और मुंबई जैसी 99: से अधिक शहरी आबादी है।

शहरी प्रदूषण में भी दोपहर के तापमान को 0.6 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ाने की क्षमता होती है जो फिर से अन्य वायु प्रदूषकों के लिए अग्रदूत के रूप में काम करता है। सबसे प्रत्यक्ष और कारणात्मक प्रभावों में से एक वायु की गुणवत्ता पर होता है क्योंकि इसका एक महत्वपूर्ण स्थानिक सहसंबंध है; आगे वायु प्रदूषण का पर्यावरण (पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं) और मानव स्वास्थ्य रोगों जै हृदय और श्वसन से संबंधित प्रभाव पड़ता है। पर्यावरण पर इसकी सकारात्मक और नकारात्मक प्रतिक्रिया होती है। शहरी हवा की गुणवत्ता का निवासी आबादी, वाहनों की संख्या, औद्योगिक उत्पादन के मूल्य आदि के साथ सीधा और सकारात्मक महत्वपूर्ण संबंध है जो अध्ययन और समय की आवश्यकता को और अधिक महत्वपूर्ण बनाता है।

3. वायु गुणवत्ता पर प्रभाव

शहरीकरण का प्रभाव हवा की गुणवत्ता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करने की बहुत संभावना है, अधिक आबादी वाले शहरों में खराब हवा की गुणवत्ता होती है जो सतह के ताप के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जनसंख्या घनत्व, उद्योग, तेजी से शहरीकरण दर, एरोसोल, खुली हवा में जलन आदि हवा की गुणवत्ता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में प्रदूषकों के प्रमुख स्रोतों में से एक मोटर–वाहन उत्सर्जित यौगिक हैं जैसे CO, NOx, PM10, PM2.5, PM0.1, ब्लैक कार्बन, पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन और बेंजीन। शहरों में कणिका तत्व का निलंबन भीड़भाड़ वाली सड़कों पर अधिक पाया जाता है। औद्योगिक विकास के कारण सतही वायु प्रदूषक बढ़ रहे हैं जो वायु प्रदूषण के लिए भी महत्वपूर्ण हैं।

शहरीकरण में कार्बन पृथक्करण को प्रभावित करने की भी क्षमता है क्योंकि यह वायु प्रदूषकों की सांद्रता में बदलाव के साथ भूमि के गुणों को बदलता है जिसका कार्बन पृथक्करण के साथ महत्वपूर्ण संबंध है। बढ़े हुए वायु प्रदूषण ने कुछ अन्य गंभीर जलवायु संबंधी घटनाओं जैसे अर्बन हीट आइलैंड (यूएचआई) या ठंडे द्वीप को जन्म दिया, जो इसे जलवायु नियमन के प्राथमिक चालकों में से एक बनाता है। शहरी आबादी और शहरों में PM2.5 की सघनता में एक महत्वपूर्ण सकारात्मक संबंध है। उदाहरण, मई और दिसंबर में UHI परिमाण दिल्ली में क्रमशः 2.2 डिग्री सेल्सियस और 1.5 डिग्री सेल्सियस पाया गया और बीजिंग में सामान्य दिनों की तुलना में तीव्रता 11.1: अधिक थी। दिन और रात दोनों समय सतह ओजोन सांद्रता में क्रमशः 2.9–4.2: और 4.7–8.5: की वृद्धि पाई गई है, जिसके कारण धुंध का निर्माण हुआ। प्रदूषकों में ये परिवर्तन नियमित वर्षा स्थानिक लौकिक प्रतिरूप में भी बाधा डालते हैं और चरम घटनाओं को जन्म देते हैं। कई अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि शहरी विकास ने वायु गुणवत्ता को खराब कर दिया है, हालांकि प्रभाव शहरीकरण के प्रकार और स्थान पर भी निर्भर करता है।

शहरी वायु प्रदूषण व्यापक रूप से ज्ञात है और मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण पर इसका दीर्घकालिक प्रभाव भी 50 से अधिक वर्षों से एक मान्यता प्राप्त मुद्दा है और नकारात्मक प्रभाव भी वैज्ञानिक रूप से सिद्ध और प्रशंसित हैं। चूंकि निर्मित क्षेत्र न केवल बड़े शहरों में बढ़ रहे हैं, बल्कि छोटे शहरों में भी तेजी से विस्तार हो रहा है, जिसके परिणामस्वरूप रहने वाले लोगों की जीवन शैली में बदलाव आया है, जो उन्हें स्वास्थ्य समस्याओं के प्रति अधिक संवेदनशील बनाता है। उच्च शहरीकरण वाले क्षेत्रों में हाल के दिनों में अधिक पुरानी बीमारियाँ होती हैं और इसके परिणामस्वरूप, जन्म दर में कमी की प्रवृत्ति और 65 वर्ष से अधिक की बढ़ती जनसंख्या पाई गई है। खराब हवा की गुणवत्ता बच्चों के लिए न्यूरोटॉक्सिन भी हो सकती है क्योंकि वे वायु प्रदूषण के प्रति अत्यधिक संवेदनशील और कमजोर वर्ग हैं। भारत और चीन जैसे देशों में हृदय रोगों के कारण मृत्यु दर में भी वृद्धि देखी गई है।

वायु प्रदूषकों की तीव्र सांद्रता न केवल प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होती है बल्कि सतह के गर्म होने या यूएचआई घटना का भी प्रभाव पड़ता

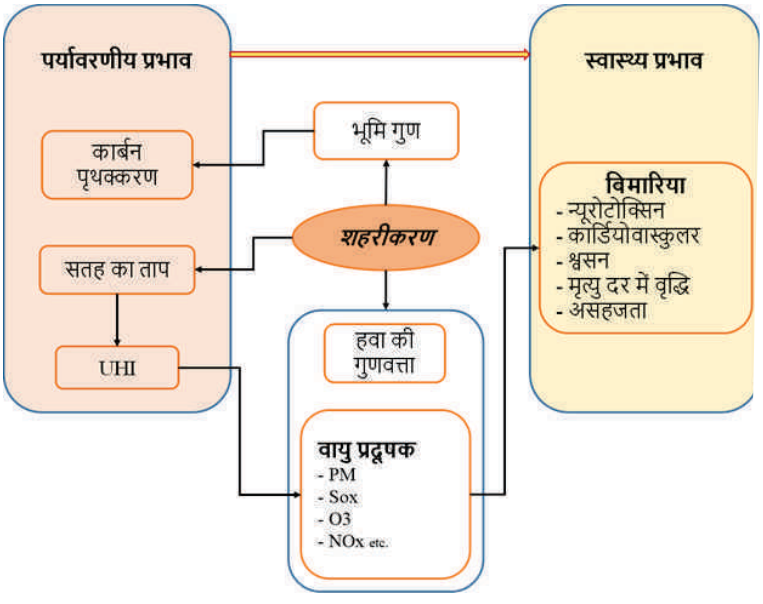

चित्र 1: शहरीकरण का वायु गुणवत्ता पर प्रभाव

है जो चक्रीय तरीके से काम करता है (चित्र 1)। शहरी गतिविधियों के कारण एलयूएलसी परिवर्तन पौधों, जंगलों और अन्य हरित आवरण की कार्बन पृथक्करण क्षमता का एक कारण है। मानव स्वास्थ्य शहरीकरण के नेतृत्व वाले वायु प्रदूषकों का अंतिम कारण है जो पर्यावरणीय स्वास्थ्य पर भी निर्भर करता है। यदि पर्यावरणीय स्वास्थ्य बिगड़ता है तो बाकी संतुलन में नहीं हो सकते।

4. निष्कर्ष

वायु प्रदूषण की गंभीरता मानव स्वास्थ्य के साथ–साथ क्षेत्र के सामाजिक–अर्थशास्त्र के लिए भी खतरा है। इस समीक्षा में वायु गुणवत्ता पर शहरीकरण के प्रभाव को समझा गया है। हालांकि एक व्यापक समीक्षा के माध्यम से भी, सभी मापदंडों और वायु गुणवत्ता के साथ उनके संबंध को ध्यान में रखना मुश्किल है क्योंकि इसका अंतर्निहित शहरी सतहों के साथ एक जटिल संबंध है। एक विस्तृत अध्ययन के लिए एक मॉडल–आधारित मानकीकरण की आवश्यकता होती है और इसमें शहरी भवन की ऊँचाई, भूमि–उपयोग पैच आकार और सतह तापीय वातावरण जैसे सतही पैरामीटर शामिल होते हैं। कई राज्यों के लिए बड़े पैमाने पर वायु प्रदूषण के जोखिम को कम करना बहुत मुश्किल काम है इसके लिए जमीनी स्तर पर प्रदूषण में कमी और नए टिकाऊ ऊर्जा प्रतिस्थापन पर काम करने की आवश्यकता हैं। मूर्त सतत विकासात्मक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए लोगों को वायु प्रदूषण के वर्तमान परिदृश्य और इसके प्रभाव के बारे में जागरूक होना बहुत महत्वपूर्ण है। इसके परिणामों को दूर करने के लिए बेहतर नीतिगत सुधारों और वैज्ञानिक अनुसंधान की आवश्यकता है।

कृषि धारणीयता

विषय विशेषज्ञ से समीक्षित

खरीफ की दलहनी फसलों में समन्वित कीट एवं रोग प्रबंधन

❑ डॉ. रुद्र प्रताप सिंह, डॉ. विजय लक्ष्मी राय, डॉ. रणधीर नायक एवं डॉ. डी.के. सिंह

दलहनी फसलों का हमारे दैनिक जीवन में बहुत बड़ा योगदान है । इसमें 20 से 25 प्रतिशत प्रोटीन पायी जाती है । इसके अतिरिक्त रेशा, विटामिन, खनिज लवण जैसे–लौह, मैगनिशियम, फास्फोरस, जिंक आदि पाया जाता है, जो मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है । दलहनी फसलें भूमि को आच्छादन प्रदान करती हैं, जिससे भूमि का कटाव कम होता है, साथ ही नत्रजन स्थिरीकरण का नैसर्गिक गुण होने के कारण वायुमण्डलीय नत्रजन को अपनी जड़ों में स्थिर करके मृदा उर्वरता को बढ़ाती है। विश्व में दलहन की खेती 93.18 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल में की जाती है, जिससे 964.0 किलोग्राम/हेक्टेयर उत्पादकता के साथ 89.82 मिलियन टन उत्पादन प्राप्त होता है (वार्षिक रिपोर्ट 2021–22, दलहन विकास निदेशालय, भोपाल, म०प्र०)। विश्व में दलहन की खेती मुख्य रूप से भारत, कनाडा, म्यांमार, चीन, ब्राजील, आस्ट्रेलिया, रूस, यूक्रेन, यू0एस0ए0, फ्रांस तथा तंजानिया में की जाती है । भारत दुनिया में दालों का सबसे बड़ा उत्पादक एवं उपभोक्ता देश है । विश्व स्तर पर दलहन के क्षेत्रफल एवं उत्पादन में हमारा देश अग्रणी है। हमारे देश में दलहन की खेती 28.78 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल में की जाती है, जिससे 885 किलोग्राम/हेक्टेयर उत्पादकता के साथ 25.46 मिलियन टन उत्पादन प्राप्त होता है । हमारे देश में दलहन की खेती मुख्य रूप से मध्य प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात आदि राज्यों में की जाती है। दालों की प्रति व्यक्ति प्रति दिन की उपलब्धता 45 ग्राम है। दलहनी फसलों जैसे–चना, अरहर, उर्द, मूंग, मसूर व मटर की खेती प्रमुख रूप से की जाती है । खरीफ दलहनी फसलों में अरहर, उर्द व मूंग प्रमुख हैं। दलहनी फसलों में कई प्रकार के कीटों व रोगों का प्रकोप होता है, जिससे उत्पादन अधिक प्रभावित होता है। खरीफ दलहनी फसलों में लगने वाले कीट व रोगों का समेकित प्रबंधन निम्न प्रकार है।

अरहर के प्रमुख कीट एवं रोगः

(क) पत्ती एवं प्ररोह मोड़क कीटः इस कीट का पतंगा छोटा गहरे भूरे रंग का होता है तथा इसकी सूड़ी छोटी हल्के पीले रंग की होती है । यह कीट जुलाई–अगस्त में सर्वाधिक सक्रिय रहता है । पौधे की पत्ती के निचली सतह पर इसका प्रभाव अधिक होता है । इसकी सूड़ी ऊपर के 3–4 पत्तियों को मोड़कर एक लूप जैसा बना लेती है और उसी में रह कर अन्दर ही खाती रहती है । इस प्रकार क्षतिग्रस्त पौधे की वृद्धि रुक जाती है । प्रभावित पौधे में बहुत कम पत्तियां आती हैं ।

(ख) फली भेदक कीटः प्रौढ़ कीट मजबूत एवं हल्के भूरे रंग का होता है । इसके अगली जोड़ी के पंखों पर भूरे रंग के बिन्दु पाए जाते हैं जो कि धारीदार रेखाएं बनाते हैं तथा ऊपर की तरफ काले रंग के धब्बे पड़े रहते हैं, नीचे वृक्काकार धब्बा पाया जाता है । पिछले जोड़ी के पंख सफेद हल्के रंग के होते हैं तथा बाहरी सिरे पर काली धारी का किनारा होता है ।

मादा कीट अरहर के पुष्पों, फलियों, कोमल फलियों एवं कभी–कभी प्ररोह के अग्रभाग पर एक–एक करके अण्डे देती है । रात्रि में दिये गये अण्डों से 2–5 दिनों में गिडारें निकलकर करीब 4–5 दिनों तक फलियों के ऊपरी भाग को खुरचकर खाती हैं। तत्पश्चात गिडारें (सूड़ियाँ) फलियों में गोलाकार छिद्र बनाकर विकसित हो रहे दानों को खा जाती हैं तथा छिद्रों के स्थान पर सूड़ी का मल लगा रहता है।

(ग) फली मक्खीः यह कीट अरहर का प्रमुख शत्रु है। वयस्क मक्खी धात्विक हरे रंग की होती है । इसका आकार छोटा होता है । आखें त्रिभुजाकार बड़ी तथा हरे रंग की होती है । अक्टूबर से अप्रैल के मध्य अरहर की फलियों पर मक्खी का प्रकोप अत्यधिक रहता है । तेज जाड़े में इस कीट की वृद्धि धीमी हो जाती है । इस कीट के जीवन काल की अण्डा, गिडार एवं प्यूपा जैसी सभी अवस्थाएं फली के भीतर ही पूरी होती हैं। अण्डों से निकलने के बाद गिडारें विकसित दानों की वाह्य पर्त को कुछ समय तक खाती हैं, तत्पश्चात ये दानों में छेदकर प्रवेश कर जाती हैं एवं भीतर ही भीतर दानों को खाकर क्षति पहुंचाती हैं। पूर्ण विकसित गिडार दाने पर नालीनुमा स्थान बनाकर दाने से बाहर आ जाती है ।

अरहर के प्रमुख रोगः

(क) उकठा रोगः यह रोग फ्यूजेरियम नामक कवक से फैलता है जो पौधों में पानी एवं खाद्य पदार्थ के संचार को रोक देता है, जिससे पत्तियां पीली पडकर सूख जाती हैं और पौधा सूख जाता है । इसकी जड़े सड़कर गहरे रंग की हो जाती हैं तथा छाल हटाने पर जड़ से लेकर तने की ऊँचाई तक काले रंग की धारियां पायी जाती हैं ।

(ख) तना विगलनः इस रोग में पौधा सूख जाता है, पर पौधों की

कृषि विज्ञान केंद्र, कोटवा, आजमगढ़ (उ०प्र०), 276207
सहायक प्राध्यापक (कीट विज्ञान), कृषि महाविद्यालय परिसर, कोटवा, आज़मगढ़ (उ०प्र०)
ई–मेलः rudrapsinghdoe@gmail.com

जड़ें स्वस्थ रहती हैं । पौधों के तनों पर भूमि सतह के पास या उसके ऊपर भूरे रंग के विक्षत हो जाते हैं, जो पौधे के तनों को चारों ओर से घेर लेती है जिससे ऊपर का भाग सूख जाता है प्रायः तने के किनारे फूलकर फट जाते हैं ।

(ग) बंझा रोगः ग्रसित पौधों में पत्तियां अधिक लगती हैं, पत्तियां छोटी तथा हल्के रंग की हो जाती हैं । ग्रसित पौधों में फूल नहीं आते, जिससे फलियां तथा दाना नहीं बनता । यह रोग माईट के द्वारा फैलता है।

समेकित कीट एवं रोग प्रबंधनः

1. ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई करनी चाहिए जिससे भूमि के अन्दर उपस्थित कृमिकोष तथा हानिकारक रोगों के कारक आदि नष्ट हो जाएं ।
2. नीम की खली 2 क्विंटल/हेक्टेयर अथवा मूंगफली की खली 10 क्विंटल/हेक्टेयर की दर से खेत की अन्तिम जुताई तक प्रयोग करना चाहिए ।
3. कीट एवं रोग अवरोधी/सहनशील प्रजाति जैसे–नरेन्द्र अरहर –1, 2, मालवीय चमत्कार, पूसा–2002, मालवीय विकास, पूसा–9, आशा आदि प्रजातियों को लगाना चाहिए ।
4. बीज बोने से पहले शोधन कार्य ट्राईकोडर्मा पाउडर की 5–10 ग्राम/किलोग्राम बीज दर से अथवा कार्बेण्डाजीम / थीरम (2 व 1 ग्राम/किग्रा0) से करना चाहिए । फाइटोफ्थोरा झुलसा रोग नियंत्रण हेतु बीज शोधन मेटालैक्जिल (एप्रान) की 6 ग्राम/किग्रा0 बीज दर से करना चाहिए ।
5. अरहर की बुवाई मेड़ पर करनी चाहिए, जिससे तना विगलन की समस्या से निजात पाया जा सके । खेत में जल भराव न होने दें ।
6. रोगग्रसित पौधों को जड़ सहित उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
7. बाजरे की लम्बी प्रजाति को अरहर के साथ उगाने से चिड़िया उन पर बैठकर कीटों का प्राकृतिक रूप से नियंत्रण करती हैं ।
8. अगेती व पिछेती बुवाई की दशा में कीटों का प्रकोप अधिक होता है। अतः देर से पकने वाली प्रजाति की बुवाई जुलाई में तथा शीघ्र पकने वाली प्रजातियों की बुवाई जून के मध्य में कर देनी चाहिए।
9. फसल की बुवाई संस्तुत दूरी (पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60–70 सेमी0 तथा पौध से पौध की दूरी 25 सेमी0) पर ही करनी चाहिए।
10. फली भेदक कीट के लिए जब फसल 60–65 दिन (सितम्बर–अक्टूबर) की हो जाए तब गन्धपास (फेरोमोन ट्रैप) का उपयोग करना चाहिए। एक से दूसरे गंधपास की दूरी 30 मीटर होनी चाहिए तथा फसल से 1–2 फिट ऊपर रहे। 14 दिन के अन्तराल पर ल्योर आवश्यकता अनुसार बदलते रहना चाहिए तथा उस पर आकर्षित नर प्रौढ़ कीट को नष्ट कर देना चाहिए।
11. फली भेदक कीट के 5–6 अण्डे/पौधा या 1–2 सूड़ी/पौधा से अधिक दिखायी देने पर नीम का सत 5 प्रतिशत घोल को 1 प्रतिशत साबुन के घोल के साथ मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।
12. फली भेदक कीट की हानि आर्थिक क्षति स्तर पर पहुँचने पर 15 दिनों के अन्तराल पर एच0एन0पी0वी0 की 250 लार्वा समतुल्यांक मात्रा/हेक्टेयर की दर से 3 बार छिड़काव करना चाहिए । इस घोल को प्रभावी बनाने के लिए 0.5 प्रतिशत गुड़ व 0.1 प्रतिशत साबुन या टिपाल का घोल मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।
13. यदि कीट का नियंत्रण सही तरीके से नहीं हो पा रहा हो तो रासायनिक कीटनाशी जैसे– इण्डाक्साकार्ब 15.8 प्रतिशत ई.सी. की 1 मिली0/लीटर पानी या स्पाइनोसैड 45 प्रतिशत एस.पी.1 मि0ली0/2लीटर पानी या इमामेक्टिन बेंजोएट 5 प्रतिशत एस. जी. की 1 मिली0/2–3लीटर पानी की दर से 50 प्रतिशत फूल आने तथा 50 प्रतिशत फली आने पर छिड़काव करना चाहिए ।
14. जिस खेत में उकठा रोग अथवा तना विगलन की समस्या हो तो उस खेत में 3–4 वर्ष का फसल चक्र अपनाना चाहिए।
15. बंझा रोग नियंत्रण हेतु मिल्वीमेक्टिन दवा की 1 मिली0/लीटर पानी की दर से या प्रोपारगाईट की 3 मिली0/लीटर पानी की दर से घोल बनाकर 2–3 छिड़काव 10–12 दिनों के अन्तराल पर करना चाहिए ।

उर्द एवं मूँग के प्रमुख कीटः

1. **फली छेदकः** इस कीट की सूड़ियां उर्द, मूँग की पहले पत्तियों को खाती हैं, बाद में जैसे ही फलियां बनना प्रारम्भ होती हैं, तो फलियों को भेदकर उनके विकसित हो रहे दानों को खाती जाती हैं। युवा सुंडी शुरुआत में कली, फूल और छोटी फलियों पर छेद करती हैं जिसके परिणामस्वरूप ये सूख कर गिर जाती हैं। फलियाँ बनने के समय छेद बनाकर अन्दर घुसकर दानों को आंशिक या पूरी तरह से खाती है और फलियों को मल और जाल से पूरी तरह से भर देती है। फलियों पर बड़ा सा छिद्र सुंडी के निकलने के समय दिखाई देता है। अंततः फलियों पर फफूंद पैदा होने के कारण फलियाँ ख़राब हो जाती हैं एवं उनसे दुर्गन्ध आती है।

2. **थ्रिप्सः** इसके शिशु एवं प्रौढ़ पत्तियों एवं फूलों का रस चूसते हैं, जिससे पत्तियां सिकुड़ जाती हैं, तथा फूल मुड़ने लगते हैं एवं गिर जाते हैं फलस्वरूप फलियां कम लगती हैं ।

3. **सफेद मक्खीः** इसके शिशु एवं प्रौढ़ दोनों ही पौधों की पत्तियों एवं कोमल तनों से रस चूसकर हानि पहुँचाते हैं। यह कीट पीला मोजैक रोग विषाणु को अधिक फैलाता है, जिससे पत्तियां पीली पड़कर सूखने लगती हैं। इसके अतिरिक्त फसल पर यह कीट मधुस्राव छोड़ता है, जिस पर बाद में काले रंग की फफूंद उग आती है, जिसके कारण प्रकाश संश्लेषण क्रिया सुचारू रूप से न होने से पौधे का विकास अवरूद्ध हो जाता है। प्रभावित पौधे से उत्पादन नहीं मिल पाता है।

उर्द एवं मूँग के प्रमुख रोगः

1. **पीला चितेरी रोगः** इसे पीला चितेरी रोग भी कहते हैं। यह एक विषाणु जनित रोग है, जो सफेद मक्खी द्वारा फैलता है। रोगी पौधों की पत्तियों पर पीले, सुनहरे चकत्ते पाये जाते हैं। रोग की उग्र अवस्था में पूरी पत्ती पीली पड़ जाती है। पत्तियां विरूपित होकर आकार में छोटी हो जाती हैं। रोगी पौधों में पुष्प एवं फलियां स्वस्थ्य पौधों की अपेक्षा कम लगती हैं। भयंकर स्थिति में फलियां या तो नहीं बनती अथवा बहुत छोटी बनती हैं । दाने सिकुड़कर छोटे हो जाते हैं।

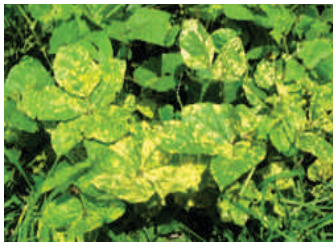

2. **पर्णदाग रोगः** इसे पत्तियों का धब्बा रोग भी कहते हैं। यह एक फफूंद जनित रोग है। पत्तियों पर भूरे रंग के गोलाई लिए हुए कोंड़ीय धब्बे बनते हैं जिसमें बीच का भाग हल्के राख के रंग का या हल्का भूरा तथा किनारा लाल बैंगनी रंग का होता है। ये धब्बे तनों पर भी पाये जा सकते हैं । रोगी पौधों की पत्तियां फूल लगने के समय गिर जाती हैं। रोग की उग्र अवस्था में फलियों पर धब्बों के बनने से उनका रंग काला पड़ जाता है। बीज भी सिकुड़कर हल्के बनते हैं।

3. **पर्णव्याकुंचन (लीफ क्रिंकल):** इस रोग के विशिष्ट लक्षण पत्तियों की सामान्य से अधिक वृद्धि तथा बाद में इनमें सिलवटें या मरोड़ पड़ना (व्याकुंचन) होता है ये पत्तियां छूने पर सामान्य पत्तियों से अधिक मोटी तथा खुरदुरी प्रतीत होती हैं। इस रोग का प्रसार माहूँ कीट के द्वारा होता है।

4. **रूक्ष रोग (एन्थ्रेक्नोज):** पत्तियों एवं फलियों पर भूरे गोल धँसे हुए धब्बे पड़ जाते हैं। इन धब्बों का केन्द्र गहरे रंग का और बाहरी सतह चमकीली लाल रंग की होती है । संक्रमण बढ़ने पर पौधे के रोगग्रसित भाग जल्दी सूख जाते हैं ।

समेकित कीट एवं रोग प्रबंधनः

1. खेती की ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई करनी चाहिए, जिससे कीटों व रोगों के अवशेष तथा रोगग्रसित भाग तेज धूप से नष्ट हो जाएं।
2. रोग अवरोधी प्रजाति जैसे–उर्द की नरेन्द्र उर्द–1, पन्त उर्द 29, 30, 31, 35, यू0जी0–218, बसन्त बहार, आजाद उर्द–1, मांस–479, विश्वास, टाईप–9 आदि तथा मूँग की – पी0डी0एम0–54, 11, नरेन्द्र मूँग –1, पूसा–9531, स्वाति, मालवीय जागृति, पूसा रत्ना, सत्या, एम0एल0–131, 422 आदि प्रजातियों को बोना चाहिए ।
3. खेत को खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए जिससे कीटों व रोगों को संरक्षण न प्राप्त हो सके ।
4. बीज शोधन हेतु ट्राईकोडर्मा पाउडर की 5 ग्राम/किग्रा0 बीज अथवा वीटावैक्स 0.5 ग्राम/किग्रा0 बीज दर से करना चाहिए ।
5. रस चूसक कीट नियंत्रण हेतु बीज शोधन इमिडाक्लोप्रिड 70 प्रतिशत डब्ल्यू.एस की 3 ग्राम/किग्रा0 बीज दर से करके बुवाई करनी चाहिए ।
6. कीट नियंत्रण हेतु खेत की अन्तिम जुताई के समय कार्बोफ्यूरान 3 जी. की 25 किग्रा./हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए।
7. मक्का, ज्वार, बाजरा के साथ सह फसली खेती करनी चाहिए।
8. फली छेदक कीट निगरानी हेतु फेरोमोन ट्रैप 5/हेक्टेयर तथा नियंत्रण हेतु "T" के आकार की 60–70 डंडियाँ/हेक्टेयर लगानी चाहिए।
9. कीट व रोग से प्रभावित पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
10. नीम आधारित उत्पादों जैसे–नीम बाण, नीम गोल्ड, अचूक, निम्बीसिडीन आदि की 3–4 मिली0/लीटर पानी या नीम का सत की 5 मिली0/ली0 पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए ।
11. फली छेदक कीट नियंत्रण हेतु 2–3 छिड़काव इण्डाक्साकार्ब 15.8 प्रतिशत ई.सी की 1 मिली0/लीटर पानी या स्पाइनोसैड 45 प्रतिशत एस.पी.1 मिली0/2लीटर पानी या इमामेक्टिन बेंजोएट 5 प्रतिशत एस.जी.की. 1 मिली0/2–3 लीटर पानी की दर से 50 प्रतिशत फूल आने तथा 50 प्रतिशत फली आने पर छिड़काव करना चाहिए। रस चूसक कीट सफेद मक्खी, थ्रिप्स, माहूँ के नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस0एल0 की 3 मिली0/10लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।
12. पर्णदाग रोग नियंत्रण हेतु क्लोरोथैलोनील 75 प्रतिशत डब्ल्यू0पी0 की 2 ग्राम/लीटर पानी या कैब्रियोटाप 60 प्रतिशत डब्ल्यू0जी0 की 1 ग्राम/लीटर पानी की दर से घोल बनाकर 2–3 छिड़काव 10 दिनों के अन्तराल पर करना चाहिए।

निष्कर्ष :

वर्तमान समय में दलहनी फसलों में कीट एवं रोगों की विविधता, संख्या, प्रकोप के समय एवं तरीकों में परिवर्तन हुआ है जिसे परंपरागत प्रबंधन विधि से नियंत्रित करना मुश्किल है ऐसे में एकीकृत दृष्टिकोण से कीट रोग प्रबंधन विधि की महत्ता बढ़ जाती है। एकीकृत प्रबंधन में हम उपयुक्त विधियों जैसे सांस्कृतिक नियंत्रण, जैविक नियंत्रण एवं रासायनिक नियंत्रण का मिश्रण करके कीटों की आबादी को आर्थिक क्षति स्तर के नीचे लाकर दलहनी फसलों को नुकसान से बचा सकते हैं। हम एकीकृत प्रबंधन में पारंपरिक कीटनाशक उपचार और स्थानीय ज्ञान को पूर्ण रूप से न त्याग कर उन्हें एक स्थाई प्रणाली में उपयोग करते है। यदि देखा जाय तो भारत में उगायी जाने वाली दलहनी फसलों की सीमित रोग प्रतिरोधी प्रजातियां उपलब्ध हैं। दलहनी फसलों की ज्यादातर प्रजातियां जैविक एवं अजैविक कारकों के प्रति संवेदनशील हैं। अतः जैविक एवं अजैविक कारकों द्वारा लगने वाले रोग एवं विकारकों का प्रारम्भिक स्तर पर पहचान कर उनका निवारण करना अच्छी पैदावार के लिए नितान्त आवश्यक एवं उपयोगी सिद्ध हो सकता है। उपर्युक्त प्रबंधन कार्यों को अपनाकर कीट एवं रोगों से दलहनी फसलों को बचाकर अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है, साथ ही साथ पोषक तत्व की कमी को भी पूरा किया जा सकता है ।

एकीकृत कृषि

विषय विशेषज्ञ से समीक्षित

छोटे और सीमांत किसानों की आजीविका में सुधार के लिए पशुधन आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली

❑ डॉ. सुधांशु शेखर एवं डॉ. शिव मंगल प्रसाद

हमारे भारतवर्ष में ज्यादातर कृषक लघु और सीमान्त किसानों की श्रेणी में आते हैं जिनके पास जमीन का रकबा बहुत ही कम है। जलवायु परिवर्तन से सभी प्रभावित हो रहे हैं और हमारे इस श्रेणी के किसान तो ज्यादा। ऐसे में सिर्फ खेती के द्वारा उनके आजीविका में सुधार, आय में वृद्धि एवं परिवार को कुपोषणता से मुक्ति नहीं हो सकती है। ऐसे किसानों को पशुधन आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली ही एक मात्र विकल्प है जो उन्हें विभिन्न प्रकार के संबल प्रदान कर उनके आजीविका में सुधार, आय में वृद्धि एवं परिवार को कुपोषणता से मुक्ति दिला सकती है। उनके खेतों की उर्वरता भी बरकरार रह सकती है और सालों भर रोजगार मिल सकता है।

हाल के वर्षों में खाद्य सुरक्षा, आजीविका सुरक्षा, जल सुरक्षा के साथ–साथ प्राकृतिक संसाधनों के साथ पर्यावरण संरक्षण दुनिया भर में प्रमुख मुद्दों के रूप में उभरे है। विकासशील देशों को इन मुद्दों से निपटने के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है और जलवायु परिवर्तन और वैश्वीकरण के दोहरे बोझ से भी जूझना पड़ रहा है। टिकाऊ कृषि की व्यापक अवधारणा के भीतर 'एकीकृत कृषि प्रणाली' विशेष स्थान रखती है, क्योंकि इस प्रणाली में कुछ भी बर्बाद नहीं होता है, एक प्रणाली का उपोत्पाद दूसरे के लिए निवेश/इनपुट बन जाता है। एकीकृत खेती मौजूदा एकल खेती (मोनोकल्चर) के दृष्टिकोण की तुलना में खेती के लिए एक एकीकृत या समन्वित दृष्टिकोण है । इस तकनीक में कृषि (खेती) के साथ–साथ बागवानी, पशुपालन, कुक्कुट पालन, मतस्य पालन को बढ़ावा दिया जाता है। इससे किसानों की आमदनी बढ़ाने में काफी मदद मिलती है। इस प्रणाली के अंतर्गत कृषि के कम से कम दो घटक या फिर दो से अधिक घटकों का समायोजन इस प्रकार करते है कि एक के समायोजन से दूसरे के लागत मे कमी लाये एवम् उत्पादन में वृद्धि करे जिससे कि किसानों को सालों भर आमदनी प्राप्त हो सके। इस प्रणाली में एक घटक दूसरे घटक के परिपूरक होते हैं यानि एक घटक का उपयोग दूसरे घटक में किया जाता है। इसमें शामिल घटकों के बीच में परस्पर प्रतिस्पर्धा अधिक न होकर दूसरे को सहायता करने वाले होते हैं ।

पशुधन परंपरागत रूप से किसानों के घर का एक अभिन्न अंग रहा है, क्योंकि यह न केवल कृषि उत्पादन में बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बढ़ाने और कृषि अपशिष्टों के पुनर्चक्रण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह ग्रामीण क्षेत्र में विशेष रूप से भूमिहीन मजदूरों, छोटे और सीमांत किसानों और खेतिहर महिलाओं के बीच पारिवारिक आय के पूरक और लाभकारी रोजगार पैदा करने का एक प्रमुख स्रोत है। पशुधन आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली भारत में बढ़ती कृषि प्रणालियों में से एक है। इस प्रकार की कृषि प्रणाली का प्रचलन हमारे देश में अनादि काल से परम्परागत रूप से चला आ रहा है। कृषि प्रणाली के मूल सिद्धांत खेत के अपशिष्ट का उत्पादक पुनर्चक्रण है। एकीकृत कृषि प्रणाली में विभिन्न उपप्रणालियाँ एक साथ काम करती हैं जिसके परिणामस्वरूप उनके एकल उत्पादन के योग की तुलना में कुल उत्पादकता अधिक होती है। पशुधन आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली में मछली–पशुधन के साथ–साथ पशुधन–फसल खेती प्रमुख घटक है। इसके अलावा, यह प्रणाली गरीब छोटे किसानों, जिनके पास फसल उत्पादन के लिए बहुत कम भूमि है और कृषि उत्पादन में विविधता लाने के लिए कुछ पशुधन हैं, नकद आय में वृद्धि, उत्पादित भोजन की गुणवत्ता और मात्रा में सुधार और अप्रयुक्त संसाधनों के अवशोषण मे मदद करती है। जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण और आय वृद्धि पशु मूल के भोजन की मांग में पर्याप्त वृद्धि को बढ़ावा दे रहे हैं, जबकि फसलों और पशुओं के बीच प्रतिस्पर्धा भी बढ़ रही है, फसल क्षेत्रों में वृद्धि, हरा चारा उत्पादन और चारागाह क्षेत्रों मे कमी होती जा रही है। पशुधन क्रांति मौजूदा उत्पादन की क्षमता को बढ़ा रही है, लेकिन यह पर्यावरणीय समस्याओं को भी बढ़ा रही है। इसलिए, जबकि उपभोक्ता मांग को पूरा करना आवश्यक है।

विकासशील देशों में तेजी से बढ़ती आबादी एवम् बढ़ते शहरीकरण और बढ़ती आय के कारण मानव के आहार में बदलाव हो रहा है, आहार में प्रमुख भोजन (अनाज और कंद) का उपयोग कम हो रहा है जबकि फलों, सब्जियों और पशु–स्रोत खाद्य पदार्थ (दूध, अंडे, मांस, और मछली) की मांग आहार में अधिक होने के कारण पर्यावरण, आर्थिक और सामाजिक चुनौतियां खड़ी हो रही है। भूमि क्षरण एवम् जल का ह्रास तो हो ही रहा है साथ ही ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन भी अधिक हो रहा है। इन मुद्दों को संतुलित करने के लिए मिश्रित फसल–पशुधन प्रणालियों की आवश्यकता है। पशुधन आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली ग्रामीण भारत में छोटे और सीमांत किसानों के बीच एक पारंपरिक प्रथा है। किसानों की आय बढ़ाने के लिए डेयरी, बकरी पालन, भेड़ पालन, मछली पालन, मुर्गी पालन, बत्तख पालन आदि के साथ फसल आधारित कृषि का विविधीकरण आवश्यक है। भूमि जोत की तुलना में पशुधन किसानों के बीच अधिक समान रूप से वितरित है। कृषि प्रणाली में प्रमुख मुद्दा कृषि अपशिष्ट के उत्पाद का पुनर्चक्रण होता है। एकीकृत कृषि प्रणाली में कृषि प्रणाली के विभिन्न घटक एक साथ कार्य करते हैं जिसके परिणामस्वरूप उनके व्यक्तिगत उत्पादन के योग की तुलना में कुल उत्पादकता अधिक होती है। कृषि वर्ष में 5–6 महीने की अवधि के लिए मौसमी रोजगार प्रदान करती है और पशुपालन कम अवधि के दौरान रोजगार प्रदान करता है। पशुधन क्षेत्र किसानों को पोषण

1. कृषि विज्ञान केन्द्र, कोडरमा, झारखण्ड,
2. केन्द्रीय वर्षाश्रित उपराउं भूमि चावल अनुसंधान केन्द्र, हजारीबाग, झारखण्ड, 825301
ई–मेलः smp_crri@yahoo.in

सुरक्षा (दूध, मांस और अंडे) भी प्रदान करता है। पशुधन किसानों को आत्म–सम्मान प्रदान करता है, जब उनके उत्तम नस्ल के बैल और अधिक दुध देने वाले डेयरी पशु होते हैं। गाय के गोबर और अन्य चारे के कचरे को बहुमूल्य फार्म यार्ड खाद में विघटित किया जाता है। किसान गाय के गोबर का 40–60: इस्तेमाल खाद के रूप में और बाकी ईंधन के रूप में करते है। ग्रामीण भारत के अधिकांश हिस्सों में अभी भी विभिन्न कृषि कार्यों के लिए किसान बैलों पर निर्भर हैं। छोटे और सीमांत किसान खेती में प्रयुक्त होने वाले वस्तुओं और खेती से प्राप्त उत्पादों, दोनों की ढुलाई, और परिवहन के लिए बैलों पर निर्भर हैं। बैल बहुत सारे ईंधन की बचत कर रहे हैं जो यांत्रिक शक्ति के संचालन के लिए आवश्यक वस्तु है।

पशुधन और फसल आधारित कृषि प्रणाली: पशुधन और फसल कृषि प्रणाली भारत के अधिकांश भागों में प्रचलित एक प्रमुख कृषि प्रणाली है। एक ही खेत में पशुधन के साथ फसलों को एकीकृत करने से छोटे किसानों को आय और रोजगार सृजन के स्रोतों में विविधता लाने में मदद मिलती है। पारस्परिक लाभ के माध्यम से फसल और पशुधन एक दूसरे के पूरक हैं। पशुधन और फसल प्रणाली में, पशु घटक को अक्सर कृषि अपशिष्ट उत्पादों पर पाला जाता है, जबकि पशु का उपयोग भूमि पर खेती करने (हल जोतने), खाद प्रदान करने और उनके गोबर को ईंधन के रूप में उपयोग करने के लिए किया जाता है। पशुओं और फसलों से प्राप्त अवशेष को खाद में बदलकर मिट्टी को पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम के साथ–साथ अन्य बहुत से सूक्ष्म पोषक तत्वो की पूर्ति की जा सकती है। जिससे मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार होने के साथ साथ मिट्टी की उत्पादन क्षमता बढ़ती है। फसलों और पशुधन के अपशिष्ट पदार्थों को फिर से इस्तेमाल करने से उर्वरकों का उपयोग कम किया जा सकता है साथ साथ पर्यावरण में सकारात्मक असर पड़ता है। पशु मिट्टी को धीरे–धीरे समृद्ध करने और फसल को सहारा देने के लिए मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पशुओं की भारोत्तोलन शक्ति का उपयोग कृषि कार्यों और परिवहन के लिए भी किया जाता है। जबकि फसल अवशेष पशुओं के लिए चारा प्रदान करते हैं और अनाज उत्पादक पशुओं के लिए पूरक आहार प्रदान करते हैं। पशु खाद और अन्य प्रकार के पशु अपशिष्ट भी प्रदान करते हैं। एक जोड़ी बैल से 12 टन खाद की उपलब्धता होती है । गाय का गोबर कृषि प्रणाली की समग्र स्थिरता में मदद करता है। गोबर में मिट्टी की उर्वरता और फसल वृद्धि में सुधार के लिए आवश्यक पोषक तत्व और सूक्ष्म पोषक तत्व होते हैं। गाय के गोबर का उपयोग बायोगैस के उत्पादन के लिए किया जाता है। बायोगैस अक्षय, वैकल्पिक और टिकाऊ ऊर्जा का एक स्रोत है। प्रति टन खाद में 8 किलो नाइट्रोजन, 4 किलो फॉस्फोरस और 16 किलो पोटैशियम होता है। खाद के प्रयोग से मिट्टी की उर्वरता और जल धारण क्षमता में सुधार होता है । खरपतवार नियंत्रण की लागत कम हो जाती है जहां पशुधन वृक्षारोपण के तहत चरते हैं। पशुधन पालन से सूखे के वर्षों में भेद्यता कम हो जाती है, यदि खराब मौसम से फसल बर्बाद हो जाती है या किसी कारण बस पशु मृत्यु की दशा में यदि कृषि प्रणाली से आय नहीं होती है तो पशु पालन प्रणाली (पशु पालन,बकरी पालन, मुर्गी पालन, या अन्य पालन) से आमदनी आ जाती है। खासतौर पर बाजार में मंदी और प्राकृतिक आपदाओं से उत्पन्न खतरों से बचाव में भी मदद मिलती है। जो किसान व्यावसायिक कृषि के साथ पशु पालन करते है उनमे आत्महत्या करने की दर काफी कम होती है। छह गायों के साथ एकीकृत कृषि प्रणाली से अकेले फसल में 400 मानव दिवसों के मुकाबले 910 मानव दिवसों का रोजगार सृजित किया जा सकता है।

पशुधन, फसल और मछली आधारित खेती प्रणाली: पशुधन, फसल और मछली पालन प्रणाली का अनुपालन मछली को पशुधन और फसल खेती प्रणाली के साथ एकीकृत करके किया जा सकता है, मछली को बिना किसी अतिरिक्त पूरक आहार के पालन किया जा सकता है, उपलब्ध गोबर की मदद से तालाब में मछली पालन किया जा सकता है। एकीकृत पशुधन, फसल और मछली पालन एक सीमित भूमि क्षेत्र से लाभ बढ़ाने और फसलों में विविधता लाकर जोखिम को कम करने के लिए किया जा सकता है । मछली प्रबंधन उद्देश्यों के लिए जल स्तर बनाए रखने के लिए पूरे वर्ष ताजा और स्वच्छ पानी की पर्याप्त आपूर्ति उपलब्ध होनी चाहिए। गाय के गोबर में पोषक तत्व मछली के तालाब में पादप प्लावक (फाइटोप्लांकटन) और प्राणी प्लावक (जू प्लांकटन) के विकास में मदद करेंगे। पशुधन के उप–उत्पादों जैसे खाद, मूत्र और गिरा हुआ चारा का उपयोग सीधे तौर पर मछली पालन के लिए किया जा सकता है। वयस्क मवेशी सालाना लगभग 4,000–5,000 किलोग्राम गोबर एवम् 3,500–4,000 लीटर गौ मूत्र उत्पादन करते हैं। एक हेक्टेयर के आकार के तालाब के लिए 5–6 वयस्क मवेशी पर्याप्त खाद प्रदान कर सकते हैं। इस प्रणाली में 9,000 किलोग्राम दूध के अलावा, लगभग 3,000–4,000 किलोग्राम मछली/हेक्टेयर/वर्ष का उत्पादन किया जा सकता है। इस प्रणाली से गोबर उठाने में श्रम की बचत होगी।

पोल्ट्री और मछली आधारित कृषि प्रणाली: मछली पालन में उर्वरकों और चारे की लागत को कम करने के लिए पोल्ट्री और मछली पालन प्रणाली को एकीकृत किया जा सकता है। पोल्ट्री को मछली तालाब के पास या उसके ऊपर पाला जा सकता है और पोल्ट्री मलमूत्र सीधे मछली तालाब में गिरेगा और उपयोग हो जाएगा। इस प्रणाली में कुक्कुट को ज्यादा की संख्या में पाला जाता है। कुक्कुट के मल में 3% नाइट्रोजन, 2%फॉस्फेट और 2% पोटाश होता है। कुक्कुट का मल(बीट) उर्वरक के एक अच्छे स्रोत के रूप में कार्य करती है जो मछली के तालाब में मछली फ़ीड यानी फाइटोप्लांकटन और जू प्लांकटन के उत्पादन में मदद करती है। 1000 चिकन को एक हेक्टेयर मछली तालाब के साथ एकीकृत किया जा सकता है, जो मछली के अस्तित्व और विकास के लिए इष्टतम पानी की गुणवत्ता प्रदान करता है और मलमूत्र का भार 3600 किलोग्राम (शुष्क पदार्थ) प्रति हेक्टेयर / महीने तक होती है। कुक्कुट–मछली एकीकरण संसाधन उपयोग दक्षता के उचित उपयोग और पर्यावरण के अनुकूल बढ़ता है। एकीकृत पोल्ट्री–मछली पालन ने रुपये की अतिरिक्त आय 4000–5000 प्रति वर्ष और रोजगार के 45–50 मानव दिवस उत्पन्न किया जा सकता है । मछली–मुर्गी पालन प्रणाली से अधिकतम 33664.06 रु. प्रति 0.025 हेक्टेयर का लाभ प्रति वर्ष हो सकता है। कुक्कुट , मछली और बागवानी किसान को एकीकृत करके 40,000 रू0 पोल्ट्री से 25,000 रु. मछली से और तालाब की मेड़ पर उगने वाली सब्जी से 6000 रु. रुपये कमाए जा सकते है । जबकि मछली और कुक्कुट एकीकरण से बिना किसी पूरक आहार के 1.0 हेक्टेयर मछली तालाब से सालाना 4500 से 5000 किलोग्राम मछली, 70,000 अंडे और 1000 किलोग्राम चिकन मांस का उत्पादन किया जा सकता है।

पशुधन, फसल और बैकयार्ड मुर्गी पालन: घर के पिछवाड़े में ज्यादा अंडे (220–240 प्रतिवर्ष) देने वाली उन्नत प्रजातियां (बनराजा, गिरिराज ,कैरी देवेन्द्र,कावेरी,झारसीम,दिव्यायान रेड, कैरी निर्भिक इत्यादि) को सम्मिलित करते हुए मुर्गी पालन परिवार की आय और पोषण सुरक्षा के लिए ग्रामीण लोगों के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बैकयार्ड पोल्ट्री फार्मिंग के साथ पशुधन और फसलों की खेती का एकीकरण पोषण सुरक्षा में सुधार के साथ–साथ किसानों की आय में वृद्धि करेगा। भेड़, बकरी, सूअर और कुक्कुट परिवार के लिए आय के आपातकालीन स्रोत प्रदान करते हैं। पक्षी गोबर में बिना पचे अनाज के साथ–साथ खेतों में कचरे की सफाई करते हैं। बैकयार्ड पोल्ट्री उन कीड़ों और कीटों का भी शिकार करती है जो फसलों में रोगों की घटनाओं के लिए जिम्मेदार होते हैं। पक्षियों के अतिरिक्त आहार के लिए अलग से निवेश की आवश्यकता नहीं होती है। अंडे और चिकन किसान परिवार के लिए उपलब्ध प्रोटीन का अच्छा स्रोत होने के साथ–साथ नियमित रूप से आय प्रदान करते हैं।

छोटी जुगाली पशु, फसल और बागवानी आधारित कृषि प्रणाली: छोटे जुगाली करने वाले पशु (जैसे भेड़, बकरी) छोटे, सीमांत और भूमिहीन किसानों की अर्थव्यवस्था में अति महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन उद्यमों का एकीकरण कुल उत्पादकता बढ़ा सकता है एवम पारिस्थितिक संतुलन और आर्थिक स्थिरता बनाए रखता है। छोटी जुगाली करने वाले पशु एकीकृत कृषि प्रणाली भी किसानों को आय प्रदान, कर मिट्टी की उर्वरता में सुधार करने में मदद करती है। खरपतवार को बकरी के चारे के रूप में उपयोग किया जाता है और फसल में बीमारियों की घटनाओं को कम करता है। शुष्क भूमि में फसल, फल के पेड़ और बकरी के एकीकरण के छोटे और सीमांत किसानों की आय में काफी वृद्धि हुई है। छोटे जुगाली करने वाले सीधे चारे के पेड़/झाड़ियाँ चर सकते हैं। बागवानी के पेड़ छोटे जुगाली करने वालों के लिए गुणवत्ता वाला चारा और आय सृजन के लिए फल प्रदान करेंगे।

छोटे जुगाली करने वाले और वृक्ष सह चारागाह आधारित खेती प्रणाली: इस प्रणाली में जमीन के एक ही टुकड़े पर बारहमासी पेड़ों के साथ–साथ उन्नत चरागाह प्रजातियों या घास के मिश्रण उगाए जाते हैं। इसमें पशुओ को चराना और पशुओ के लिए चारे के रूप में पेड़ों की पत्तियों को लूप करना शामिल है। यह प्रणाली हरे चारे की समस्या को हल करती है और चारा की कमी वाले अवधि के दौरान पशुओं को केंद्रित फ़ीड की लागत को कम करती है। चारे के पेड़ जैसे सुबबूल (ल्यूकेना लैटिसिलिका), कचनार (बाउहिनिया वेरिगाटा),सीरिस (अल्बिज़िया लैबबेक), कृष्ण सीरिस (अल्बिज़िया अमारा), सहजन (मोरिंगा ओलेरिफेरा), जयंती (सेस्बानिया सेस्बान), अगस्त (एस ग्रैंडिफ्लोरा), अंजन (हार्डविकिया बिनाटा) देश के विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग किया जाता है। बिना किसी संपूरक आहार के वन व चारागाह (सिल्वीपाश्चर) पर चरने वाले मेमनों के शरीर के वजन प्राकृतिक घास के मैदान में चरने वाले मेमनों से अधिक दर्ज किया गया है बकरी के एकीकरण के साथ एकीकृत कृषि प्रणाली, ज्वार (सोरघम) + बोदी (लोबिया), सुबबूल प्रजाति (ल्यूकेना ल्यूकोसेफला) + धामन घास (सेन्क्रस सिलियारिस), त्रिकंटकी (बबूल सेनेगल) + धामन घास (सेन्क्रस सिलियारिस) ने शुष्क भूमि में सालाना 113 श्रम दिवस प्रति हेक्टेयर का अतिरिक्त रोजगार पैदा करता है । पशुओं के चरने से गोबर से उर्वरता बढ़ती है और मूत्र मिट्टी में बहुमूल्य पोषक तत्व जोड़ता है। पत्तियों और झाड़ियों को चरने के दौरान पशुओ की गतिविधियां होती है जिससे कीट और कीट को आश्रय बाले स्थान खत्म होते है इस वजह से बीमारियों का प्रकोप कम होता है।

निष्कर्ष : पशुधन आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली छोटे और सीमांत किसानों में प्रति इकाई क्षेत्र प्रति इकाई समय में आर्थिक उपज बढ़ाने का अवसर प्रदान करती है। इस प्रणाली में उपयुक्त घटकों को जोड़कर अपशिष्ट पदार्थों को प्रभावी ढंग से पुनर्चक्रण किया जाता है। इस प्रकार पर्यावरण प्रदूषण को कम करता है। एकीकृत कृषि प्रणाली में उत्पाद, उप–उत्पादों और अपशिष्ट पदार्थों का पुनर्चक्रण कृषि प्रणाली की स्थिरता के लिए अति आवश्यक कारक हैं। फसलों के साथ विभिन्न पशुधन घटकों के एकीकरण के कारण, अंडे, मांस और दूध का उत्पादन किसानों को वर्ष भर पौषनिक सुरक्षा और आय प्रदान करता है। पशुधन उद्यमों के साथ फसल को मिलाने से श्रम की आवश्यकता में काफी वृद्धि होगी और रोजगार की समस्याओं को काफी हद तक कम करने में मदद मिलता है । टिकाऊ कृषि के लिए पोषण सुरक्षा, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन और पर्यावरण संरक्षण प्रमुख अवयव हैं । एकीकृत कृषि प्रणाली कृषि उत्पादन में विविधता लाती है, आय में वृद्धि करती है, पोषण सुरक्षा में सुधार करती है और पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण को बढ़ावा देती है।

जलीय कृषि

विषय विशेषज्ञ से समीक्षित

एक्वापोनिक्स : पर्यावरण अनुकूल खेती के लिए एक आशाजनक विधि

❑ श्री आदित्य कुमार एवं श्री रविन्द्र कुमार

एक्वापोनिक्स खेती एक लचीली कृषि प्रणाली है जो बेहतर पोषण प्रदान करती है। एक्वापोनिक फार्मिंग दो शब्दों से मिलकर बना है जिसमें पहला है एक्वाकल्चर, जिसके तहत भारत देश एक कृषि प्रधान देश के रूप में जाना जाता है। कृषि का देश की अर्थव्यवस्था में भी बहुत बड़ा योगदान है। दुनिया में सभ्यता के प्रारम्भ से ही खेती की जा रही है। क्योकि बिना किसी फसल को उगाये और खेती किये किसी भी अन्न की पैदावार नहीं की जा सकती। खेती को करने के लिए उपयुक्त मिट्टी, धूप, पानी और खाद की आवश्यकता होती है। बिना इस सामग्री का इस्तेमाल किये खेती को नहीं किया जा सकता है। इसमें पहले जमीन में पौधे या बीजो को लगाकर कुछ महीनो या सालो में फसल या पेड़ो को तैयार किया जाता है।

मछली पालन होता है और दूसरा है हाइड्रोपोनिक, जिसमें पानी पर खेती होती है। यह मछली और सब्जियाँ दोनों उगाने का एक टिकाऊ तरीका है। यह आधुनिक खेती में रुचि रखने वाले व्यक्तियों, उद्यमियों, मिशनों और सरकारों के बीच काफी लोकप्रिय हो रहा है। इसके अलावा, इस प्रकार की इनडोर खेती से, आप पारंपरिक कृषि प्रणालियों की तुलना में कम पानी, भूमि और श्रम के साथ काफी अधिक भोजन उगाते हैं। एक्वापोनिक्स खेती का एक रूप है जो मिट्टी रहित पौधों की संस्कृति (हाइड्रोपोनिक्स) के साथ टैंकों में मछली पालन (रीसर्क्युलेटिंग एक्वाकल्चर) को एकजुट करता है। एक्वापोनिक्स में, मछली का पोषक तत्वों से भरपूर पानी पौधों के लिए प्राकृतिक उर्वरक की आपूर्ति करता है, और पौधे मछली के जीवित रहने के लिए पानी को शुद्ध करने में मदद करते हैं।

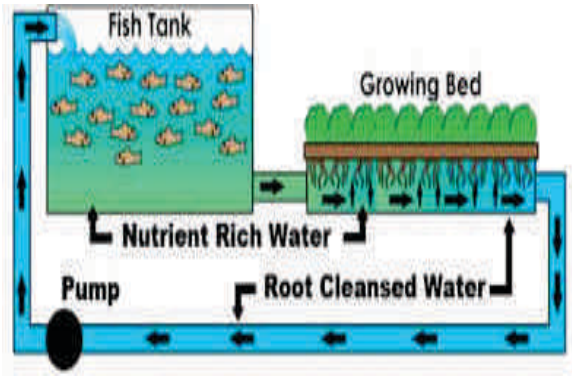

एक्वापोनिक फार्मिंग कैसे होती है

इसके तहत एक टैंक में मछली पालन किया जाता है और दूसरी तरफ पानी पर हाइड्रोपोनिक खेती का सिस्टम बनाया जाता है। टैंक में मछलियां फीड खाने के बाद करीब 70 फीसदी तक मल निकालती हैं, जिसमें अमोनिया होता है। अगर यह टैंक में ही पड़ा रहे तो मछलियां के लिए जानलेवा साबित हो सकता है। मछलियों के टैंक के उस अमोनिया वाले पानी को हाइड्रोपोनिक खेती के लिए इस्तेमाल किया जाता है। जब ये पानी पौधों की जड़ों तक पहुंचता है तो वहां पर जड़ों में मौजूद बैक्टीरिया इसे नाइट्रोजन में तोड़ देते हैं, जो पौधों के विकास के लिए बहुत ही अहम होता है। इसके बाद पानी को फिर से प्यूरिफाई किया जाता है और दोबारा मछलियों के टैंक में डाला जाता है। इस तरह एक ही पानी बार–बार इस्तेमाल होता रहता है और पानी की बचत होती है। कई लोग तो नीचे टैंक में मछली और उसी के ऊपर सब्जियां भी उगाते हैं। हालांकि, उसमें पानी को कुछ–कुछ दिनों पर बदलने की जरूरत होती है।

चित्रः एक्वापोनिक खेती

एक्वापोनिक्स मछली के प्रकार

एक्वापोनिक्स प्रणाली में मछली प्रमुख घटकों में से एक है और यह एक आवश्यक भूमिका निभाएंगे क्योंकि वे पौधों के लिए प्राकृतिक उर्वरक का स्रोत होंगे। मछली आपके पौधों के लिए भोजन और उर्वरक की आपूर्ति करती है, इसलिए यह योजना बनाना अनिवार्य है कि आप किस प्रकार के पौधे उगाना चाहते हैं और उन्हें सही प्रकार की मछली प्रजातियों के साथ जोड़ना चाहते हैं।

भारत में एक्वापोनिक खेती के लिए उपयुक्त मछलियाँ

1. तिलापियाः तीव्र विकास दर (अंगुलिका से कटाई तक लगभग नौ महीने)
2. ट्राउटः ट्राउट ठंडा पानी पसंद करते हैं और 12-20° C के बीच के तापमान में पनपते हैं, जो उन्हें ठंडे वातावरण के लिए आदर्श बनाता है।
3. कैटफ़िशः कैटफ़िश सबसे अच्छी तरह से पाली जाने वाली मछलियों में से एक है और अपने स्वाद के लिए लोकप्रिय है।

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरों, लखनऊ, 226002
ई–मेलः ravindra53kumar@gmail.com

कैटफ़िश नीचे से भोजन करने वाली और मूल्यवान सफाईकर्मी हैं जो विभिन्न प्रकार की जल स्थितियों का सामना कर सकती हैं। वे प्रादेशिक नहीं हैं और प्रजनन और पालन–पोषण करना आसान है। कैटफ़िश, तिलापिया के समान तापमान 24-28° C पर पनपती है और इसके लिए 7–8.4 पीएच की आवश्यकता होती है।

4. सजावटी मछलीरू कोई और सुनहरीमछली जैसी सजावटी मछलियाँ भी एक अच्छा विकल्प हैं, खासकर यदि आप केवल अपना सिस्टम शुरू कर रहे हैं और इसका परीक्षण करना चाहते हैं, यदि आप मछली को खाद्य स्रोत के रूप में उपयोग करने में रुचि नहीं रखते हैं, और सजावटी और पालतू मछली की किस्में अवश्य होनी चाहिए आपके क्षेत्र के बाज़ार में उपलब्ध है। कोइ एक्वापोनिक्स में पाली गई सबसे प्रशंसित सजावटी मछलियों में से एक है। कोइ का जीवनकाल लंबा होता है और यह एक्वापोनिक प्रणाली में आराम से प्रजनन कर सकता है और जीवित रह सकता है। कोइ कई प्रकार के भोजन को बनाए रख सकता है और रोग और परजीवी प्रतिरोधी भी है। वे 18-25° C के तापमान और 6.5–8 के पीएच स्तर पर पनपते हैं।

गोल्डफिश एक्वापोनिक्स के लिए एक उत्कृष्ट सजावटी मछली है जिसकी देखभाल करना आसान है। वे एक कठिन मछली प्रजाति हैं जो उच्च स्तर के जल प्रदूषण में भी जीवित रह सकती हैं। सुनहरीमछलियाँ 25–28° C के तापमान को प्राथमिकता देती हैं और 6 से 8 के पीएच रेंज को पसंद करती हैं। अपने छोटे आकार और परजीवी प्रकृति के कारण, सुनहरी मछलियाँ खाने योग्य नहीं होती हैं।

भारत में एक्वापोनिक खेती के लिए उपयुक्त सब्जियाँ

जो पौधे हाइड्रोपोनिक प्रणालियों के साथ संगत हैं, वे ज्यादातर मामलों में एक्वापोनिक प्रणालियों के साथ भी संगत होंगे क्योंकि एक्वापोनिक्स एक प्रकार का हाइड्रोपोनिक्स है। पत्तेदार हरी सब्जियाँ और जड़ी–बूटियाँ एक्वापोनिक प्रणाली में सबसे अधिक और सबसे सफलतापूर्वक उगाई जाती हैं। खीरे और टमाटर भी अक्सर उगाए जाते हैं लेकिन एक्वापोनिक्स चुनने वाले शुरुआती लोगों के लिए यह थोड़ा उन्नत हो सकता है।

एक्वापोनिक प्रणाली के लिए पौधों का चयन करने से पहले निम्नलिखित कारकों पर विचार करें:

1. आप किस प्रकार की प्रणाली का उपयोग करने जा रहे हैं। यह प्रणाली मीडिया–आधारित, एनएफटी, राफ्ट एक्वापोनिक्स प्रणाली हो सकती है। ये तय करेंगे कि पौधों में किस प्रकार की जड़ संरचना होती है। कम जड़ संरचना वाले पौधे तैरते हुए राफ्टों में अच्छी तरह विकसित होंगे; जबकि जड़ वाली सब्जियाँ ग्रो बेड में अच्छी तरह विकसित होती हैं।
2. अपने पौधों की आवश्यकताओं पर विचार करें। एक नियम के रूप में, आपके पौधे की आवश्यकताएं आपके सिस्टम में मछली की आवश्यकताओं के जितनी अधिक समान होंगी, वे उतनी ही बेहतर वृद्धि करेंगी। ऐसे पौधों और मछलियों का चयन करें जिनकी तापमान और पीएच स्तर के मामले में समान आवश्यकताएं हों, क्योंकि वे जितना करीब से मेल खाएंगे, आपको उतनी अधिक सफलता मिलेगी।
3. पर्यावरण एक स्वस्थ पौधे को उगाने के लिए सूर्य की रोशनी, तापमान और बारिश की मात्रा सभी महत्वपूर्ण हैं। यदि आप बाहर उगाने का निर्णय लेते हैं, तो विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ पसंद करें जो आपकी जलवायु में सबसे अच्छी तरह उगें। आप हमेशा ग्रीनहाउस का उपयोग कर सकते हैं या घर के अंदर उगा सकते हैं, लेकिन आपको शोध करने और ऐसे पौधों को खोजने की ज़रूरत है जो सीमित या कृत्रिम प्रकाश के साथ अंदर अच्छा करते हैं। ऐसा पौधा चुनना सबसे अच्छा है जो आपकी जलवायु में पनपता है, क्योंकि इससे आपके सिस्टम को बनाए रखने में बिजली की लागत भी कम हो जाएगी।

एक स्थापित एक्वापोनिक्स प्रणाली में उगने वाले पौधे

विभिन्न पौधों की पोषण संबंधी आवश्यकताएं अलग–अलग होती हैं, और उच्च पोषक तत्वों की मांग वाले पौधों को बनाए रखने के लिए आपके एक्वापोनिक सिस्टम को स्थापित करने की आवश्यकता होती है। एक अच्छी तरह से स्थापित प्रणाली में सभी आवश्यक लाभकारी बैक्टीरिया शामिल होते हैं। एक अच्छी तरह से स्थापित एक्वापोनिक्स प्रणाली एक ऐसी व्यवस्था है जो कम से कम 6 महीने और 3 साल तक चल रही है। ये ऐसे पौधे हैं जो एक्वापोनिक्स प्रणाली में अच्छी तरह से विकसित होते हैं लेकिन उन्हें अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है और इन्हें एक्वापोनिक्स खेती के कुछ अनुभव के साथ उगाया जा सकता है।

1. टमाटरः टमाटर के पौधे एक्वापोनिक्स प्रणालियों में असाधारण रूप से अच्छा प्रदर्शन करते हैं। टमाटरों को गर्म मौसम पसंद है लेकिन उन्हें पोषक तत्वों से भरपूर पानी की भी भरपूर आवश्यकता होती है। एक्वापोनिक्स प्रणाली के लिए टमाटर एक उत्कृष्ट विकल्प हैं जहां पर्यावरण को नियंत्रित किया जा सकता है और जहां इसकी बेलों की वृद्धि की आदत के लिए ट्रेलिस जैसी सहायक प्रणाली की योजना बनाई गई है।
2. फूलगोभीः फूलगोभी के पौधों को बहुत कम रखरखाव की आवश्यकता होती है। वे अधिकांश कीड़ों और बीमारियों के प्रति भी प्रतिरोधी हैं। फूलगोभी एक पानी आधारित पौधा है जो एक्वापोनिक्स सिस्टम में बहुत अच्छी तरह से बढ़ता है।
3. पत्तागोभीः पत्तागोभी को बहुत कम रखरखाव की आवश्यकता होती है, जो इसे एक्वापोनिक्स प्रणाली में सबसे अच्छे पौधों में से एक बनाता है। ये पानी में अच्छे से बढ़ते हैं 6.2 और 6.6 के बीच पीएच स्तर के साथ।

एक्वापोनिक फार्मिंग के फायदे

- इस खेती का सबसे बड़ा फायदा ये होता है कि इसमें लगभग 95 फीसदी पानी की बचत होती है।
- एक्वापोनिक खेती में मछलियों के मल से पौधों को न्यूट्रिशन मिलता है। इसमें कोई भी कैमिकल इस्तेमाल नहीं होता। ऐसे में इस तकनीक से उगाई गई सब्जियां या सलाद पूरी तरह से ऑर्गेनिक यानी रसायन रहित होते हैं।
- जहां पानी की कमी है या जमीन रेतीली, बर्फीली या लवणीय है, वहां पर ये खेत की जा सकती है।
- इसमें जमीन की तरह सिर्फ एक लेयर की खेती नहीं होती है, बल्कि कई स्तरों पर खेती होती है।

एक्वापोनिक फार्मिंग में ध्यान रखें ये बातें

- जमीन पर कोई भी खेती की जा सकती है, लेकिन एक्वापोनिक

फार्मिंग में आपको अलग–अलग तरह की खेती के लिए अलग–अलग इंफ्रास्ट्रक्चर बनाना होता है। ऐसे में पहले ये देख लें कि जो खेती आप करने की सोच रहे हैं, उसकी डिमांड कितनी है।

- आपको पाली हुए मछलियों, बैक्टीरिया और पौधों की अच्छी जानकारी होनी चाहिए। अगर ऐसा नहीं है तो बहुत से कंसल्टेंट भी ये काम करते हैं, आप उनकी मदद ले सकते हैं।
- इसमें तापमान को 18–32 डिग्री सेल्सियस तक कंट्रोल करना होता है, वरना पौधों को दिक्कत हो सकती है।
- एक्वापोनिक खेती में शुरुआती लागत बहुत अधिक आती है। ऐसे में किसी दुर्घटना आदि की वजह से नुकसान बहुत अधिक हो सकता है। जमीन पर हुई खेती में नुकसान कम और सीमित होता है।

निष्कर्ष

भारत में एक्वापोनिक खेती भारतीय कृषि के सामने आने वाली चुनौतियों से निपटने के लिए एक स्थायी दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। एक्वापोनिक्स के लाभों में कुशल जल उपयोग, साल भर खेती, जैविक उत्पाद और आय सृजन के अवसर शामिल हैं। आगे के शोध, प्रशिक्षण और जागरूकता के साथ, एक्वापोनिक्स में संसाधन दक्षता, खाद्य सुरक्षा और पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ावा देकर भारतीय कृषि में क्रांति लाने की क्षमता है।

Dr. Janaki Ammal

(4 November 1897 – 7 February 1984)

Was a pioneering Indian female Botanist.

She worked on plant breeding, cytogenetics, and phytogeography.

How she made India self-sustained in Sugarcane.

Sugarcane was cultivated in India, but it was not as sweet as the imported variety. At that time, the sweetest sugarcane in the world was from Papua New Guinea and India imported it from Southeast Asia.

She made several cross-breeding experiments in India, and improved native sugarcane varieties with increased sweetness.

This is how India became self-sufficient in Sugarcane

She contributed 1931 in US, in 1940 John Innes Horticultural Institute UK, 1946 Royal Horticultural Society etc.

She and her patient endeavours stand as a model for all scientific workers." The Government of India conferred the Padma Shri on her in 1977.

व्यवसायिक खेती

विषय विशेषज्ञ से समीक्षित

जुकिनी की खेती : भारत के किसानों के लिए आय बढ़ाने का एक अच्छा विकल्प

❑ डॉ. विनय कुमार

जुकिनी (कुकुर्बिटा पेपो. एल) या समर स्क्वैश एक विदेशी सब्जी है जिसे हाल ही में भारत में लोकप्रिय बनाया गया है। दुनिया के विभिन्न क्षेत्रों में इसे वेजिटेबल मैरो, फील्ड कद्दू भी कहा जाता है। इसे जुकिनी के अलावा कोर्टगेट (ब्वनतहमजजम) नाम से भी जाना जाता है। इसका दूसरा नाम समर स्क्वैश है। कुकुर्बिटेसी परिवार से संबंधित तोरई एक तेजी से बढ़ने वाली और अधिक उपज देने वाली कुकुर्बिट है जो पूरे भारत में उत्पादन के लिए उपयुक्त है। इसकी उत्पत्ति अमेरिका और उत्तर–पूर्वी मैक्सिको में हुई थी और इसे मानव उपभोग के लिए दुनिया में एकमात्र वार्षिक बुश प्रकार का कद्दू माना जाता है। पौधे में अनुगामी आदत होती है और इंटरनोड्स छोटे होते हैं और बंद क्रम में फल लग सकते हैं। फलों को वानस्पतिक रूप से पेपो कहा जाता है और इन्हें बुआई के 50–60 दिनों में काटा जा सकता है। जुचिनी अधिकतर एकलिंगी होती है लेकिन उभयलिंगी उत्परिवर्ती (मुकुंदा एट अल.) के उदाहरण भी हैं।

यह एक प्रकार की सब्जी है। जुकिनी का सेवन कच्चा और पकाकर दोनों तरह से किया जा सकता है। इसका उपयोग अक्सर स्वादिष्ट भोजन में किया जाता है और इसे सब्जी के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। यह सब्जी तीन रंगों में आती हैरू पीला, हरा और हल्का हरा। अनुमानित तौर पर जुकिनी की 10 से भी ज्यादा किस्में हैं। जुकिनी की सब्जी का आकार खीरे जैसा होता है, और इसे खाने का सबसे अच्छा समय तब होता है जब यह छोटी होती है और बीज निकलने से पहले 6 से 8 इंच लंबी होती है। तकनीकी रूप से कहें तो जुकिनी एक प्रकार का ग्रीष्मकालीन स्क्वैश है। इसकी कटाई तब की जाती है जब यह अभी भी जवान है।

जुकिनी में मानव स्वास्थ्य के साथ–साथ औषधीय क्षमताएं भी हैं । जुकिनी में विटामिन, खनिज और पौधे आधारित पदार्थ प्रचुर मात्रा में होते हैं। जुकिनी को कम कैलोरी वाली सब्जियों (17 किलो कैलोरी प्रति 100 ग्राम) में से एक माना जाता है और इसमें संतृप्त वसा या कोलेस्ट्रॉल नहीं होता है और इसके छिलके को फाइबर का एक उत्कृष्ट स्रोत माना जाता है जो कोलन कैंसर को रोकता है। बेहतर पाचन से लेकर हृदय रोग के खतरे को कम करने तक, इसके कई स्वास्थ्य लाभ हैं। यह आपके दिल को स्वस्थ बना सकता है। यह फल अत्यधिक फाइबर युक्त होता है। इसके अतिरिक्त, यह मधुमेह के विकास के जोखिम को कम करता है। जुकिनी से मधुमेह का प्रभावी ढंग से इलाज किया जा सकता है। कुछ व्यक्तियों को कच्ची जुकिनी पसंद होती है, जो सलाद के लिए बहुत अच्छी होती है। जुकिनी का स्वाद हल्का, कुछ कड़वा और थोड़ा मीठा होता है। मामूली अनुपात में, तोरी में थोड़ी मात्रा में विटामिन ए, बी 6, और सी, मैंगनीज और पोटेशियम भी होते हैं, और मैग्नीशियम और फास्फोरस के छोटे स्तर भी इस फल में पाए जाने वाले अन्य खनिज हैं।

1. जुकिनी उगाने का तरीका

1.1 जुकिनी कब लगाएं

- जुकिनी की रोपाई के लिए गर्म मौसम आदर्श है। बीज बोने या रोपाई से पहले मिट्टी के कम से कम 65 से 70 डिग्री होने तक प्रतीक्षा करें। जुकिनी की खेती अधिक समशीतोष्ण क्षेत्रों (क्षेत्र 6 और निचले) में ग्रीष्मकालीन फसल के रूप में की जाती है, और इसे अक्सर मई में लगाया जाता है। जुकिनी को दो बार उगाया जा सकता है, एक बार वसंत ऋतु में और एक बार पतझड़ में, गर्म उत्पादक क्षेत्रों (जैसे दक्षिणपूर्व, खाड़ी तट और रेगिस्तान दक्षिणपश्चिम) में।

1.2. तोरी रोपण स्थान

- जुकिनी उगाने के लिए पूर्ण सूर्य (कम से कम 6 से 8 घंटे) और लगातार नम, जैविक–समृद्ध मिट्टी की आवश्यकता होती है। तोरी के कुछ रूप बेल वाली किस्में हैं, जिन्हें फैलाने के लिए एक जाली या बहुत अधिक जगह की आवश्यकता होती है। कंटेनर में रोपण और छोटे स्थानों में उगाने के लिए उपयुक्त झाड़ीदार किस्में भी हैं।

1.3. जुकिनी उगाने के लिए जलवायु परिस्थितियाँ

- ग्रीष्मकालीन फसलें जिन्हें बहुत अधिक सीधी धूप मिलती है उनमें जुकिनी भी शामिल है। इष्टतम सीमा 18 से 24 डिग्री सेल्सियस है। जुकिनी गर्म जलवायु पसंद करती है। परिपक्व फल प्राप्त करने के लिए इसे कम से कम 50 दिनों तक पाले से मुक्त मौसम की आवश्यकता होती है। जब विकास स्थान को कम से कम 6 घंटे तक सीधी धूप मिलती है, तो जुकिनी के पौधे स्वस्थ होते हैं। जुकिनी के बीजों को अंकुरित होने के लिए 28 से 32 डिग्री सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है, जबकि तोरी नर्सरी के पौधों के लिए 22 से 29 डिग्री सेल्सियस तापमान आदर्श होता है।

1.4. तोरी उगाने के लिए मिट्टी की आवश्यकताएँ

- जुकिनी उगाना दोमट से लेकर अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी में सबसे अच्छा होता है। पौधों पर केवल जैविक उर्वरकों का उपयोग करें और, सबसे महत्वपूर्ण बात, यह सुनिश्चित करने के लिए हर कुछ वर्षों में अपनी मिट्टी का परीक्षण करें कि यह स्वस्थ और संतुलित है। उच्च कार्बनिक पदार्थ सामग्री और 6.5 पीएच वाली मिट्टी तोरी के पौधों को उगाने के लिए सबसे अच्छी होती है। ढीली मिट्टी में, अंकुर स्वायत्त लगेगा। चूँकि तोरी के पौधे बहुत सारा भोजन खाते हैं, इसलिए मिट्टी को कार्बनिक पदार्थों से समृद्ध होना चाहिए। हल्की मिट्टी जल्दी बीज बोने के लिए उपयुक्त होती है, जबकि भारी मिट्टी उन पौधों के लिए सर्वोत्तम होती है जो मौसम में देर से पैदा होंगे।

1.5 पौधों की दूरी और अंकुरण दर

बॉटने विभाग, पंजाब केंद्रीय विश्वविद्यालय, 143005
ई–मेल : vinayihbt@gmail.com

- जुकिनी उगाने के लिए, बीज दर 1–1.25 किलोग्राम/एकड़ है; ग्रीष्मकालीन स्क्वैश उगाने के लिए, यह 2 किग्रा/एकड़ है।

1.6 बुआई की अवधि

- फरवरी के अंतिम सप्ताह या मार्च के पहले सप्ताह में जब रात का तापमान 18 से 20 डिग्री सेल्सियस के बीच गिर जाता है तब बीज बोया जाता है। दिसंबर से फरवरी तक, नर्सरी को एक ढकी हुई संरचना में 3.5 सेमी कोशिकाओं के साथ प्लग ट्रे में उगाया जा सकता है।

1.7 पौधे की दूरी

- जुकिनी के पौधों को लगभग 1 मीटर की दूरी पर रखा जाता है, एक पंक्ति में प्रत्येक पौधे के बीच 500 से 900 मिमी की दूरी होती है। प्रति हेक्टेयर, इसका परिणाम 7500–11,000 पौधे होते हैं।

1.8 उर्वरक नियंत्रण

- उर्वरक और खाद के ये दो सबसे महत्वपूर्ण कार्य हैं। वे मिट्टी को सही पोषक तत्व प्रदान करते हैं, जो मजबूत पौधों के विकास में मदद कर सकते हैं।

यदि आप चाहते हैं कि आपकी जुकिनी प्राकृतिक रूप से विकसित हो तो रोपण से पहले मिट्टी में खाद या अच्छी तरह सड़ी हुई खाद मिलाएं। इसके अतिरिक्त, आप जैविक खाद का उपयोग कर सकते हैं। ये पौधे बहुत सारा भोजन ग्रहण करते हैं। इसलिए, उस विकास को बनाए रखने के लिए उन्हें पर्याप्त पोषण की आवश्यकता होती है। खेत तैयार करते समय 1.5 से 2 क्विंटल गोबर की खाद डालें। अनुशंसित एनपीके खुराक आम तौर पर 25 किलोग्राम प्रति एकड़ है।

2. सिंचाई नियंत्रण

प्रचुर मात्रा में, परेशानी मुक्त फसल पैदा करने के लिए जुकिनी के लिए नियमित नमी आवश्यक है। पौधों को जीवित रहने के लिए पानी की आवश्यकता होती है। जब मिट्टी सूखी लगे तो जुकिनी के पौधों को 1 से 2 इंच तक पानी दें। सामान्य तौर पर, जब मौसम ठंडा हो तो प्रति सप्ताह एक बार और गर्म और शुष्क होने पर प्रत्येक सप्ताह दो या तीन बार पानी उपलब्ध कराएं।

3. नियमित निराई–गुड़ाई

जुकिनी के लिए नियमित निराई–गुड़ाई की आवश्यकता होती हैः खरपतवारों को नियंत्रण में रखने और इस फसल से आर्थिक रूप से व्यवहार्य उपज प्रदान करने के लिए प्रारंभिक निराई–गुड़ाई बुआई के 15 से 20 दिनों के बीच कहीं भी की जा सकती है।

4. तोरी की कटाई का समय

चूँकि जुकिनी एक वार्षिक पौधा है, इसलिए इसका जीवनकाल केवल एक बढ़ते मौसम का होगा, जो कि विविधता, बढ़ते पर्यावरण और स्थान के आधार पर 90 से 150 दिनों तक हो सकता है। अधिकांश जुकिनी की प्रजातियाँ बीज बोने के 40 से 50 दिन बाद शुरुआती तुड़ाई के लिए उपलब्ध होती हैं। फूल आने के बाद, यह तेजी से बढ़ता है, जिससे आप जुकिनी के सख्त होने से पहले ही इसे तोड़ सकते हैं। चूँकि जुकिनी एक प्रकार का ग्रीष्मकालीन स्क्वैश है, इसके फल की त्वचा कोमल, खाने योग्य होती है। ग्रीष्मकालीन स्क्वैश तेजी से बढ़ता है और 35 दिनों के बाद तोड़ा जा सकता है। यह बाजार तक पहुंचने वाले पहले कुकुर्बिट्स में से एक है, और इसके विकास के लिए केवल बाजारों के नजदीक स्थानों का उपयोग किया जाता है।

5. जुकिनी का उपयोग :

- जुकिनी की सब्जी के रूप में खाया जा सकता है।
- वेजिटेबल सलाद में जुकिनी का इस्तेमाल कर सकते हैं।
- जुकिनी के पकौड़े बनाकर खा सकते हैं।
- जुकिनी को उबालकर या ग्रिल करके भी खा सकते हैं।
- सैंडविच में भी जुकिनी का उपयोग किया जा सकता है।

6. जुकिनी के रोगरू उन्हें कैसे पहचानें, रोकें और उनका इलाज कैसे करें

6.1. पाउडर रूपी फफूंद

कुकुर्बिटेसी परिवार के कई संबंधित सदस्यों की तरह, जुकिनी में विशेष रूप से बड़ी चौड़ी पत्तियाँ और उथली जड़ें होती हैं। हालांकि यह खरपतवारों को छाया देने और तेजी से विकास करने के लिए बहुत अच्छा हो सकता है, जुकिनी के पौधों में भी कमजोर होने पर कुछ पत्तेदार और जड़ रोगजनकों के शिकार होने की प्रवृत्ति होती है।

• कैसे करें पहचान

ख़स्ता फफूंदी बिल्कुल वैसी ही दिखती है जैसी लगती है – एक सफ़ेद या भूरे रंग की पाउडर जैसी धूल जो तोरी के पत्तों पर जम गई है, लगभग जैसे किसी ने आपके पौधों पर आटा छिड़क दिया हो। जैसे–जैसे यह आगे बढ़ता है, आप बड़े सफेद धब्बे, फफूंदीयुक्त रोएँदार तने और पीले या भूरे रंग की मृत पत्तियाँ देख सकते हैं।

• कैसे बचाना है

आप वायु प्रवाह और परिसंचरण सुनिश्चित करने वाली सांस्कृतिक प्रथाओं से इस फफूंदी को आसानी से रोक सकते हैं। नंबर एक सबसे महत्वपूर्ण निवारक तरीका आधार से पानी देना है। जुकिनी (या उस मामले के लिए किसी भी स्क्वैश) की ऊपरी सिंचाई न करें। ख़स्ता फफूंदी वर्षा और मिट्टी से पानी के छींटों के माध्यम से फैलती है, इसलिए पत्तियों को सूखा रखने के लिए ड्रिप सिंचाई या सोख्ता नली महत्वपूर्ण हैं।

पीएम को दूर रखने का एक और रहस्य पौधों के बीच पर्याप्त दूरी सुनिश्चित करना है। यदि आपका बगीचा विशेष रूप से फंगल हमलों के लिए अतिसंवेदनशील है, तो उनके बीच हवा का भरपूर प्रवाह बनाए रखने के लिए तोरी के पौधों के बीच 18–24" की व्यापक दूरी का उपयोग करें। कुछ पीएम प्रतिरोधी तोरी बीज की किस्में हैं जैसे 'डुंजा, 'सुंगलो' और 'सक्सेस पीएम'। यदि गर्मियों के अंत में ख़स्ता फफूंदी आपकी तोरी की पत्तियों को जकड़ लेती है, तो घबराएँ नहीं! सबसे आसान काम यह है कि संक्रमित पत्तियों को काट दिया जाए और उन्हें कूड़ेदान में फेंक दिया जाए, इस बात का ध्यान रखा जाए कि बीजाणु इधर–उधर न उड़ें। प्रसार को धीमा करने और आगे संक्रमण को रोकने के लिए आप पत्ती की सतह पर पतला नीम तेल का घोल भी लगा सकते हैं।

6.2. डाउनी फफूंदी

धूल जैसी ख़स्ता फफूंदी के विपरीत, डाउनी फफूंदी में पीले रंग का धब्बा दिखाई देता है। मौसम की शुरुआत या अंत में जब मौसम ठंडा और गीला होता है तो यह हावी हो जाता है।

डाउनी फफूंदी ओमीसाइकेट नामक कवक जैसे जीव के कारण

होती है, जो शैवाल से निकटता से संबंधित है। उन्हें फैलने के लिए पानी की जरूरत होती है.

कैसे करें पहचान

पत्ती के ऊपरी भाग पर पीले से हल्के हरे धब्बे डाउन फफूंदी के प्रमुख प्रारंभिक संकेतक हैं। धब्बे पत्ती की शिराओं से घिरे होंगे। बाद में वे पूरी पत्तियों को भूरा कर सकते हैं, जो अक्सर पाले से होने वाले नुकसान के समान होता है। कोणीय पत्ती के धब्बे को अलग करने के लिए, पत्तियों के नीचे की ओर भूरे या बैंगनी रंग की रोएँदार सतहों को देखें।

कैसे बचाना है

डाउनी फफूंदी को फैलने के लिए पत्ती की सतह पर नमी की आवश्यकता होती है। इसका मतलब यह है कि पानी की बूंदों को पत्तियों से दूर रखना ही खेल का नाम है। ओवरहेड सिंचाई न करें (इसके बजाय, ड्रिप का उपयोग करें)। वायु परिसंचरण में सुधार के लिए देर से जुकिनी की रोपाई में व्यापक दूरी का उपयोग करें। पत्तियों की सतह पर बारिश को रोकने के लिए आप ग्रीनहाउस या निचली सुरंगों में भी तोरी उगा सकते हैं।

हल्के संक्रमण के लिए, पतला नीम का घोल या जैविक कवकनाशी का उपयोग डाउनी फफूंदी को खत्म करने और आगे के संक्रमण को रोकने के लिए किया जा सकता है। हालाँकि, यदि यह मौसम का अंत है और पौधे पर भारी मात्रा में कब्ज़ा हो गया है, तो आमतौर पर पूरे पौधे को हटाकर कूड़े में फेंक देना सबसे अच्छा होता है। हवा की स्थिति में संभालने या पौधों के अवशेषों को खाद बनाने से बचें, क्योंकि इससे अधिक रोगज़नक़ बीजाणु फैल सकते हैं।

6.3. फ्यूसेरियम क्राउन रोट

मुरझाई हुई पत्तियाँ या मिट्टी में भरपूर नमी वाला झुका हुआ पौधा कभी भी अच्छा संकेत नहीं है। यह कवक रोग जुकिनी के पौधों को आधार से सड़ा देता है और कुछ ही दिनों में पूरे पौधों को नष्ट कर सकता है।

यह विशेष बीमारी फुसैरियम सोलानी के कारण होती है, जो मिट्टी में रह सकती है और पुराने पौधों के अवशेषों पर फैल सकती है।

कैसे करें पहचान

फ्यूजेरियम का पहला लक्षण अत्यधिक मुरझाना है। पूरा पौधा पानी होने के बावजूद निर्जलित और ढीला दिखेगा। पानी से लथपथ घाव पत्तियों पर दिखाई दे सकते हैं और फिर उत्तरोत्तर गहरे होते जाते हैं जब तक कि पत्तियाँ पूरी तरह से सड़ न जाएँ। पौधे का आधार काला और सड़ा हुआ और दुर्गंधयुक्त दिख सकता है। मुकुट के पास मिट्टी की सतह पर गुलाबी रंग के कवक के रेशे भी पाए जा सकते हैं।

कैसे बचाना है

मौसम के अंत में जुकिनी की फसल के अवशेषों को हमेशा हटा दें और उन्हें सड़ने के लिए बगीचे में छोड़ने से बचें (यह सर्दियों में कवक के लिए प्रजनन भूमि बना सकता है)। फ्यूजेरियम क्राउन रोट से लड़ने के लिए फसल चक्र भी आवश्यक है। कुकुर्बिट–परिवार की फसलों (तरबूज, खीरे, कद्दू, स्क्वैश) को 1–3 साल के लिए बगीचे के एक ही क्षेत्र से दूर रखें। अंत में, हर मौसम की शुरुआत में पर्याप्त मात्रा में खाद या पत्ती कूड़े के साथ संशोधन करके एक स्वस्थ मिट्टी माइक्रोबायोम और पर्याप्त जल निकासी सुनिश्चित करें। मिट्टी को हवा देने के लिए ब्रॉडफ़ॉर्क का उपयोग करें। अत्यधिक पानी देने से बचें।

एक बार जब फ्यूसेरियम आपके जुकिनी के पौधों को सड़ाना शुरू कर देता है, तो केवल एक चीज जो आप कर सकते हैं वह है पौधे को हटा दें और इसे कूड़ेदान में फेंक दें। इस बीमारी के लिए कोई उद्यान–अनुमोदित उपचार नहीं है, इसलिए रोकथाम महत्वपूर्ण है।

6.4. वर्टिसिलियम विल्ट

ठंडे मौसम को पसंद करने वाला यह कवक अक्सर गर्मियों के मध्य से अंत तक दिखाई देता है और कई प्रकार के पौधों पर हमला कर सकता है, जिनमें तोरी, खरबूजे, मिर्च, टमाटर और फलों के पेड़ों की एक विस्तृत श्रृंखला शामिल है।

- **कैसे करें पहचान**

इसमें कुछ अजीब विशेषताएं हैं जो इसे पहचानने में भ्रमित कर सकती हैं। सौभाग्य से, प्रमुख बीज कंपनियों के पास कई प्रतिरोधी किस्में उपलब्ध हैं। वर्टिसिलियम कवक के कारण शुरू में तोरी की पत्तियां मुरझा जाती हैं, पीली हो जाती हैं और सूख जाती हैं। कभी–कभी आधा पौधा सामान्य दिखता है जबकि आधा मुरझा जाता है। ष्वीष् से चिह्नित प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें। बगीचे के औजारों की स्वच्छता और फसल के मलबे को हटाना भी सहायक है।

- **कैसे बचाना है**

दुर्भाग्य से, वर्टिसिलियम विल्ट का कोई इलाज नहीं है। संक्रमित पौधों को हटाकर या फेंककर नष्ट कर दें।

6.5. पत्ती का झुलसा रोगः अल्टरनेरिया

एक अन्य आम जुकिनी रोग, अल्टरनेरिया कुकुमेरिना एक आक्रामक कवक है जो खीरे के साथ–साथ ब्रैसिकास में भी समस्या पैदा करता है। यह संक्रमित फसल के मलबे पर सर्दियों में रहता है और नम पत्तियों की सतहों पर पनपता है। विशिष्ट ष्बुल्सआईष् या ष्शॉट–होलष् उपस्थिति इसे पहचानना आसान बनाती है।

- **कैसे करें पहचान**

यह पत्ती झुलसा रोग पुरानी पत्तियों पर शुरू होता है और फिर छोटी पत्तियों तक फैल जाता है। इसकी विशेषता छोटे कोणीय पीले या भूरे रंग के धब्बे होते हैं जिनकी परिधि के चारों ओर हरा या पीला (प्रभामंडल)होता है। जैसे–जैसे यह बढ़ता है, धब्बे आपस में जुड़ जाते हैं और पत्तियाँ नीचे की ओर मुड़ जाती हैं और अंततः मर जाती हैं। ऊपरी सिंचाई से बचें और पौधों को केवल आधार से पानी दें। भारी बारिश के दौरान पत्तियों पर पानी के छींटे पड़ने से रोकने के लिए आप पौधों को ढकने का प्रयास कर सकते हैं। मौसम के अंत में जुकिनी की फसल के अवशेषों को हमेशा बगीचे से हटा दें। संक्रमण को रोकने के लिए पतले नीम के घोल का पत्तियों पर स्प्रे भी उपयोगी हो सकता है।

कैसे बचाना है

कुछ जैविक कवकनाशी जैसे इक्विसेटम (हॉर्सटेल) चाय, कम्पोस्ट चाय, कॉपर स्प्रे या बैसिलस सबटिलिस या एक्टिनोवेट जैसे जैव–कवकनाशी अल्टरनेरिया लीफ ब्लाइट के लिए उपयोगी

हैं। पैकेज के निर्देशों के आधार पर सीधे पत्तियों पर लगाएं। संक्रमित पत्तियों को आधार से काटकर और कूड़े में फेंककर निकालना भी सबसे अच्छा है।

6.6. ककड़ी मोज़ेक वायरस

अपने नाम के विपरीत, ककड़ी मोज़ेक वायरस जुकिनी को भी प्रभावित करता है। यह उन रोगजनकों में से एक है जो कीटों या दूषित उद्यान उपकरणों द्वारा फैलता है।

- **कैसे करें पहचान**

यह रोग जुकिनी की पत्तियों में कर्लिंग और मोज़ेक जैसा पैटर्न का कारण बनता है, जिससे अक्सर जुकिनी के पौधे गंभीर रूप से अवरुद्ध हो जाते हैं और पैदावार कम हो जाती है। सौभाग्य से, बहुत सारी प्रतिरोधी किस्में उपलब्ध हैं। विकृत, खुरदरी त्वचा वाले छोटे तोरई फल या पीले, विकृत पत्ते संक्रमण का पहला संकेत हैं। पत्तियाँ मुड़ी हुई, सिकुड़ी हुई या रेशेदार दिख सकती हैं। पत्ती की सतह पर पीले और हल्के हरे रंग का धब्बेदार मोज़ेक पैटर्न सूक्ष्म या स्पष्ट हो सकता है। पौधे जल्दी ही बौने हो सकते हैं और मुरझा सकते हैं। यह वायरस आमतौर पर एफिड या ककड़ी बीटल संक्रमण के साथ पाया जाता है।

- **कैसे बचाना है**

सीएमवी–प्रतिरोधी बीज किस्में व्यापक रूप से उपलब्ध हैं और रोकथाम का सबसे आसान तरीका हैं। श्ग्रीन मशीनश, श्येलो फिनश और श्डेजर्टश जैसी किस्में विश्वसनीय विकल्प हैं। उपयोग के बाद बगीचे के औजारों को रबिंग अल्कोहल या ब्लीच से साफ करके अच्छी स्वच्छता का अभ्यास करें। लहसुन, प्याज, या सुगंधित जड़ी–बूटियों जैसे साथी पौधों का उपयोग करने से एफिड्स और ककड़ी बीटल को दूर रखने में मदद मिल सकती है। किसी भी संक्रमित पौधे के हिस्से को हटा दें। वायरस को पूरी तरह से खत्म नहीं किया जा सकता है, लेकिन 1 1/2 चम्मच नीम तेल, 1/2 चम्मच डिश सोप और एक चौथाई पानी के घोल के साथ पत्तियों पर छिड़काव करने से एफिड्स से छुटकारा पाने में मदद मिलती है। खीरे के भृंगों को हाथ से निकालें और साबुन के घोल में डुबो दें।

संक्षिप्त सुझावः

1. केवल प्रतिष्ठित बीज स्रोतों से मजबूत स्वस्थ पौधे ही रोपें।
2. जब संभव हो तो रोग–प्रतिरोधी किस्मों का स्रोत प्राप्त करें।
3. उचित वायु प्रवाह सुनिश्चित करने के लिए पौधों के बीच पर्याप्त दूरी (सभी दिशाओं में कम से कम 18–24") प्रदान करें।
4. हर कीमत पर ओवरहेड सिंचाई से बचें।
5. इसके बजाय, तोरी के पत्तों को अतिरिक्त पानी से मुक्त रखने के लिए सोकर होज़ या ड्रिप सिंचाई का उपयोग करें।
6. जुकिनी को 1–3 साल तक एक ही बगीचे की क्यारियों से दूर रखकर फसल चक्र का अभ्यास करें।
7. जुकिनी के पास गेंदा, नास्टर्टियम और सुगंधित जड़ी–बूटियाँ जैसे साथी पौधे लगाएँ।
8. मौसम के अंत में बगीचे से हमेशा खीरे की फसल के अवशेषों को हटा दें।
9. प्रतिस्पर्धा कम करने और कीटों से बचाव के लिए खरपतवारों को दूर रखें।
10. जितना संभव हो उतना वायु प्रवाह बनाए रखें। जब संदेह हो, तो दूरी बढ़ाएँ।
11. जैविक रूप से समृद्ध जैविक खाद के साथ उदारतापूर्वक संशोधन करें।
12. इससे मिट्टी में उचित माइक्रोबियल संतुलन सुनिश्चित करने में मदद मिलेगी।

कृषि तकनीकी

विषय विशेषज्ञ से समीक्षित

उर्वरको की पहचान, उत्तम कृषि बलवान

❑ श्री शिवम सिंह[1], श्री अंकित तिवारी[2], सुश्री ऋचा रघुवंशी[3], श्री सतेन्द्र कुमार[1] एवं श्री राहुल कुमार वर्मा[4]

खेतो मे प्रयोग मे लाये जाने वाले कृषि निवेशको मे सबसे महंगी सामाग्री रासायनिक उर्वरक है। उर्वरको के सीर्ष उपयोग की अवध हेतु खरीफ और रबी के पूर्व उर्वरक विनिर्माता फैक्टरिओ तथा विक्राताओ द्वारा नकली और मिलावटी उर्वरक बनाने एवं बाजार मे उतारने की कोशिश होती है। इसका सीधा प्रभाव किसानो पर पड़ता है। नकली और मिलावटी समस्या से निपटने के लिए यद्दपी सरकार प्रतिबद्द है फिर भी यह आवश्यक है की खरीदारी करते समय कृषक भाई उरवरको की शूद्धता मोटे तौर पर उसी तरह से परख ले, जैसे की बीजो की शूद्धता बीज को दातो से दबाने पर कट और किच्च की आवाज एंव कपड़े की गुणवत्ता उसे छू कर या उसे मसल कर तथा दूध की गुणवत्ता की जाच उंगुली से टपका कर कर लेते है।

कृषको के बीच प्रचलित उरवरको मे से प्रायः डी. ए. पी., जिंक सल्फेट, यूरिया तथा यम. ओ. पी. नकली या मिलावटी रूप मे बाजार मे उतरे जाते है। खरीददारी करते समय कृषक इसकी प्रथम बार देख कर जिसकी परख निम्म्लिखित बिन्दु से कर सकते है।

1. यूरिया

पहचान विधि

- सफेद चमकदार लगभग समान आकार के गोल दाने।
- पानी मे पूरा घुल जाना तथा घोल छूने पर शीतल अनुभूति।
- गर्म तवे पर रखने से पिघल जाता है और आंच तेज करने पर कोई अवशेष नही बचता है।

2. डी. ए. पी.

पहचान विधि

- सक्त, दानेदार, भूरा, काला, बादामी रंग नाखूनो से आसानी से नही छूटता।
- डी. ए. पी. के कुछ दानो को लेकर तम्बाकू की तरह उसमे चुना मिलाकर रगरने पर खराब तीखा गंध निकलती है।
- तवे पर धीमी आंच पर गर्म करने पर दाने फूल जाते है।

3. सुपर फॉस्फेट

पहचान विधि

यह सक्त दानेदार भूरा काला बादामी रंगो से युक्त तथा नाखूनो से आसानी से नही टूटने वाला उर्वरक है। यह चूर्ण के रूप में भी उपलब्ध होता है। इस दानेदार उर्वरक की मिलावट अधिकतर डी. ए.पी. व एन.पी. के. के मिश्रण उर्वरकों के साथ की जाने की सम्भावना बनी रहती है।

परीक्षण

इस दाने दार उर्वरक को यदि गरम किया जाये तो इसके दाने फूलते नहीं हैं जबकि डी.ए. पी. व अन्य कम्प्लेक्स के दाने कूल जाते हैं। इस प्रकार इसकी मिलावट की पहचान आसानी से कर सकते है।

4. जिंक सल्फेट

पहचान विधि

- जिंक में मैग्निशियम सल्फेट प्रमुख मिलावटी रसायन है। भौतिक रूप से समानता के कारण नकली असली की पहचान करना कठिन होती है।

- डी.ए.पी. के घोल में जिंक सल्फेट के घोल को मिलाने पर धक्केदार घना अवछेप बन जाता है। मैग्निशियम सल्फेट के साथ ऐसा नहीं होता।
- जिंक सल्फेट के घोल में पतला कास्टिक का घोल मिलाने पर सफेद, मटमैला माढ़ जैसा अवछेप बनता है, जिसमे गाढ़ा कास्टिक का घोल मिलाने पर अवशेष पूर्ण घुल जाता है। यदि जिंक सल्फेट की जगह पर मैग्निशियम सल्फेट है तो अवछेप नही घुलेगा।

5. पोटाश

पहचान विधि

- सफेद कलाकार पिसे नमक तथा लाल मिर्च जैसा मिश्रण।
- ये कण नम करने पर आपस में चिपकते

1. मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान,
2. सस्य विभाग, सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रद्योगिक विश्वविद्यालय, मोदीपुरम, मेरठ–250221
3. मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान, बांदा कृषि एवं प्रद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा
4. कृषि विज्ञान केंद्र, मधेपुरा, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर

नहीं।

- पानी में घोलने पर खाद का लाल भाग पानी मे ऊपर तैरता है।

6. अमोनियम क्लोराइड, अमोनियम सल्फेट, सूक्ष्म पोषक

- ये तीन प्रकार के अन्य पोषक तत्वो जिसका जादा प्रयोग भारतीय कृषकों द्वारा किया जाता है, इसका पहचान जिला प्रयोगशाला मे ही संभव है।

'किसान मित्रो से इस पत्र से अनुरोध है की वे अपने मृदा की जाच करवा कर ही उपयुक्त मात्रा मे खादों का प्रयोग करे। इसकी

अमोनियम क्लोराइड अमोनियम क्लोराइड सूक्ष्म पोषक

सुविधा निः शुल्क एवं कुछ मानदेह पर जिला सरकारी प्रयोगशाला व गैर सरकारी संस्थाओ द्वारा किया जाता है।"

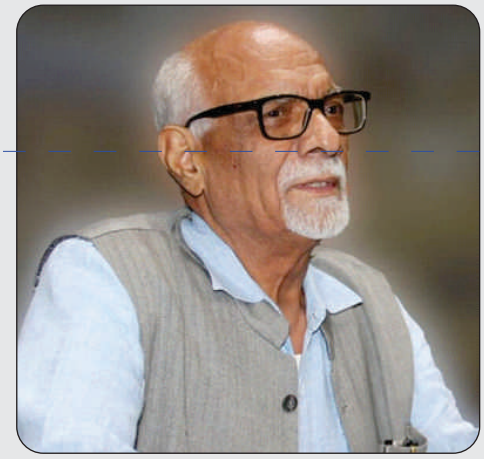

Dr. Ved Prakash Kamboj

Our beloved Dr Ved Prakash Kamboj, former Director of CSIR-CDRI and former President NASI, passed away in Jalandhar. A dynamic scientist known for CDRI's wonder female contraceptive drug, Centchroman (Saheli). Dr Kamboj was a towering personality in science and an outstanding human being. We had frequent interactions and guidance from him in many NASI -Lucknow chapter activities. It is a huge loss to scientific fraternity. Our heartfelt condolences to his bereaved daughters Mala and Bela and other family members, friends and admirers. May his pious soul rest in peace. Vinamra Shraddhanjali. Om Shanti !!!

नया अध्याय

विषय विशेषज्ञ से समीक्षित

धारणीय कृषि एवं पर्यावरण केंद्र, लखनऊ

(प्रोफेसर एच.एस. श्रीवास्तव फाउंडेशन का नया प्रयास)

❑ प्रो0 राणा प्रताप सिंह एवं श्री आकाश मार्य

प्रोफेसर एच.एस.श्रीवास्तव फाउंडेशन ने धारणीय कृषि एवं पर्यावरण केंद्र के रूप में एक और गतिविधि की शुरुआत की है जिसके तहत वैज्ञानिक दृष्टिकोण से कृषि और पर्यावरण की धारणीयता के कारकों का अध्ययन, विश्लेषण और मनन करने का कार्य शुरू किया जा रहा है। फिलहाल इस केंद्र से जुड़े अध्ययन को उत्तर प्रदेश राज्य की सीमाओं के भीतर ही करने की योजना बनी है और प्रारंभ में बाराबंकी, कुशीनगर, झाँसी और ललितपुर ये चार जिले चुने गये हैं।

हमारा पहला लक्ष्य जलवायु परिवर्तन के प्रभाव में कृषि, पर्यावरण और खाद्य सुरक्षा की बदलती आवश्यकताओं को समझना है। इसके अतिरिक्त समुचित जन भागेदारी, वैज्ञानिक उपाय तथा कृषि प्रोद्योगिकी के इस्तेमाल की संभावनाओं का आकलन करना हमारा दूसरा लक्ष्य है। इस केंद्र का तीसरा लक्ष्य शिक्षित, कुशल, अर्ध–कुशल एवं अन्य युवकोंदृयुवतियों को सक्षम बनाकर हरित चक्रीय अर्थव्यवस्था के पक्ष में छोटे– छोटे उद्योग–धंधों की श्रृंखला को जल, जमीन और जरूरतों से जोड़ना हैद्य इस श्रृंखला में हम उत्तर प्रदेश के बाराबंकी जिले पर केन्द्रित कुछ भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक, औद्योगिक, सांस्कृतिक, कृषि एवं उपलब्ध प्राकृतिक जल संसाधन का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं। यह कॉलम कहार के अगले अंकों में केंद्र के उद्देश्यों से जुड़े विभिन्न पक्षों पर नये अध्ययनों को प्रस्तुत करेगा।

उत्तर प्रदेश के बाराबंकी जिले का संक्षिप्त अध्ययन

बाराबंकी जिले में भी भारत के अन्य क्षेत्रों की तरह अधिकांश आबादी गाँवों में रहती है और खेती किसानी, मजदूरी और छोटे–मोटे उद्योग धंधों से जुड़ी हुयी है। देश के अन्य भागों की तरह बाराबंकी के किसान भी खेती बाड़ी से संतुष्ट नही हैं। छोटी जोतों, जलवायु परिवर्तन से होने वाली कृषि उपज की अनिश्चितता, पानी की कमी, आवारा पशुओं से फसलों को होने वाले नुकसान, बेहतर रोजगार की तलाश में कृषि मजदूरों का बड़े शहरों की ओर पलायन आदि समस्याओं के चलते गाँव की नई पीढ़ी खेती बाड़ी में रूचि नहीं ले रही है। बाराबंकी जिले में हालाँकि कई समृद्ध नवाचारी और प्रगतिशील किसान भी हैं परन्तु उनकी सफलता का प्रभाव गाँव की नई पीढ़ी पर उतना नही है जितना होना चाहिए। जिले के गाँव में शिक्षा, स्वास्थ्य प्रबंधन व्यवस्था, पालतू पशुओं की संख्या और सहयोग की संस्कृति भी लगातार कम हुयी है। आपसी झगड़े बढे है और सामूहिक रूप से विचार विमर्श करने की पुरानी परम्पराएं धूमिल हुयी हैं। उत्तर प्रदेश सरकार ने एक जिला एक उत्पाद की अभिनव प्रायोगिक योजना के तहत बाराबंकी जिले में वस्त्र उद्योग को बढ़ावा देने की घोषणा की है। हालाँकि लखनऊ जैसे बड़े शहर के पास होने से इस जिले में कृषि से जुड़े उद्योग–धंधों को लाभप्रद बनाने की संभावनाएं अधिक हैं (चित्र–1)। युवाओं एवं ग्रामवासियों से नई संभावनाओं को लेकर वांछित संवाद उतना नही हो पा रहा है तथा उन्हें भविष्य के लिए एक स्पष्ट दिशा नही मिल पा रही है।

हमने फाउंडेशन के धारणीय कृषि एवं पर्यावरण केंद्र के तहत कृषि उपज की जलवायु परिवर्तन से अनुकूलन, कृषि में उपलब्ध तकनीकों तथा हरित चक्रीय अर्थव्यवस्था के सिध्दांतों से प्रेरित उद्योग धंधों को शामिल करना और युवाओं को वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा पेशेवर कार्य प्रणाली से जोड़ने का गहन प्रयास शुरू किया है। इस प्रयास के अंतर्गत हम जिले के सामाजिक, आर्थिक, पर्यावरणीय व सांस्कृतिक तथ्यों का अध्ययन करेंगे।

चित्रः 1 उत्तर प्रदेश के मानचित्र में बाराबंकी जिले की स्थिति

उत्तर प्रदेश आज भारत का एक अधिकतम जनसंख्या वाला तेजी से आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक रूप से प्रगति करता और पूर्ण तन्मयता से भारतीय अर्थव्यवस्था में अपनी भागेदारी बढाता राज्य हैद्य इसका भौगोलिक क्षेत्रफल 2,40,928 वर्ग किलोमीटर है, जिसमे कुल कृषित क्षेत्रफल 2,41,70,403 हेक्टेयर एवं वन क्षेत्रफल 16,57,023 हेक्टेयर है। उत्तर प्रदेश में इस समय 75 जिले हैं जिसमे 241,066,874 जनसंख्या रहती है (2011 की जनगणना के आंकड़े के अनुसार)। संभव है कि अब 2023 तक आते–आते कृषि एवं वन क्षेत्र तथा प्रदेश में रहने वाले लोगों की संख्या में समकालीन बदलाव हुए हैं। प्रदेश में कुल 9 कृषि जलवायु क्षेत्र हैं, जिनकी आवश्यकतायें अलग– अलग हो सकती हैं। प्रदेश में 1000 पुरुषों पर 912 स्त्रियाँ हैंद्य प्रदेश की साक्षरता दर 67.68ः हैं, इसमें पुरुषों की साक्षरता दर 77.28 : व महिलाओं की 57.18 प्रतिशत है। प्रदेश में जलवायु भिन्नता के साथ–साथ आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विभिन्नता भी यह रेखांकित करती है कि हमें प्रदेश के धारणीय

जषमंडा, बाराबंकी
ई–मेल : akashmaurya096@gmail.com

विकास को समझने के लिए वृहद् और सूक्ष्म दोनों तरह के अध्ययन और विश्लेषणों की आवश्यकता है।

प्रदेश का बाराबंकी जिला 3,891.5 वर्ग किलोमीटर में फैला है। यह उत्तर–पश्चिम में सीतापुर एवं उत्तर–पूर्व में बहराइच, गोंडा एवं फैजाबाद, दक्षिण में रायबरेली, दक्षिण–पश्चिम में लखनऊ से अपनी सीमायें साझा करता है (चित्र– 2)। इंडिया वाटर पोर्टल( ) में प्रकाशित लेख के अनुसार बाराबंकी में 258.4 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र 5.9 हेक्टेयर वन क्षेत्र है। सरयू, गोमती, रेठ, कल्याणी चार छोटी–बड़ी नदियाँ इस जिले के 32,60,699 लोंगो और उनके पशुओं व फसलों को पोषित करती हैं। यह जिला 6 तहसीलों तथा 15 विकासखंडों में बंटा है। यहाँ के लोग 1845 गाँव, 12 छोटे–बड़े कस्बों और बाराबंकी शहर में निवास करते हैं। जिले में प्रदेश के औसत लिंगानुपात के हिसाब से ही पुरुष व महिलाएं हैं। इसमें पुरुषों की साक्षरता दर 70. 27 प्रतिशत तथा महिलाओं की साक्षरता दर 52.34 प्रतिशत है।

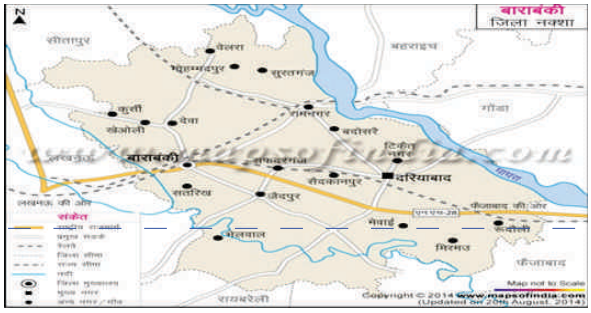

चित्र–2 बाराबंकी का मानचित्र (स्रोत : www-mapsindia-com)

आर्थिक स्थिति–

इस जिले के गांवो की अर्थव्यवस्था मोटे तौर पर कृषि व पशुपालन पर निर्भर करती है। जिले के कुछ किसान कुक्कुट पालन, मछली पालन तथा मेंथा उत्पादन भी करते हैं। सरकारी व गैर सरकारी प्रयासों से कुछ लोग मोमबत्ती, पतंग, कागज की प्लेट ,मिटटी के बर्तन, दीपक, अगरबत्ती बनाने जैसे सूक्ष्म उद्योगों से अपनी आय बढ़ाने का प्रयास भी कर रहे हैं।

इस जिले में नगदी फसलों के रूप में फल (आम, केला आदि), सब्जियां (आलू, टमाटर आदि), फूल (ग्लेडीओलस) की खेती की जाती है आलू के उत्पादन में बाराबंकी, उत्तर प्रदेश के प्रमुख क्षेत्रों में आता है। इसी के साथ छोटे किसान सब्जी इत्यादि की खेती कर अपनी आजीविका चलाते हैं तथा कुछ मजदूरी करके अपना जीवन यापन करते हैं।

सामाजिक स्थिति–

इस जिले में कोई बड़ा शहर नही होने के कारण अधिकांश लोग गाँवों में निवास करते हैं यहाँ के लोंगो का सामाजिक जीवन कृषि पर आधारित है क्योंकि कृषि उत्पादन के आधार पर ही उनके जीवन का रहन–सहन निर्भर करता है। बढती मौसम की मार ने लोंगो के जीवन स्तर को अत्यंत दयनीय बना दिया है जिन क्षेत्रों में बाढ़ जैसी समस्या रहती है वहाँ के लोग एक या दो ही फसलें ले पाते हैं या फिर गाँवों से दूर मजदूरी करने चले जाते हैं जिसका एक उदाहरण बाराबंकी जिले के सूरतगंज ब्लाक का एक गाँव है जहाँ के अधिकांश युवा बाहर राज्यों में काम करने जाते हैं तथा महिलाएं घर पर रहकर खेती के कार्य करती हैंद्य गाँवों की महिलाएं आगे बढकर अपना जीवन स्तर सुधार रही हैं तथा अपने दायित्वों को निभा रही हैंद्य

औद्योगिक स्थिति–

बाराबंकी जिले में 6 औद्योगिक क्षेत्र हैं जो अधिकांशता शहरों व कस्बों के किनारे स्थित हैद्य शहर के नजदीक क्षेत्र के ग्रामीण लोगों को ही आसानी से रोजगार उपलब्ध हो पाता है क्योंकि दूर ग्रामीण क्षेत्रों के लोग साधन की कमी या दूरी की वजह से यहाँ नही पहुँच पाते हैंद्य यदि पहुंच भी जाते हैं तो समय अधिक लगने की वजह से काम को छोड़ देते हैं किन्तु अब गाँव के युवा अग्रसर होकर लघु उद्योग जैसे मोमबत्ती, अगरबत्ती, कागज की प्लेट बनाना आदि कार्य करना भी शुरू कर रहे हैंद्य जिले में कुशल श्रमिकों की कमी है क्योंकि आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण युवक पढने में असमर्थ हैंद्य अकुशल श्रमिक होने के कारण इन्हें अच्छी आय नहीं प्राप्त होती है तथा इन्हें अन्य लाभ भी नही मिलतें हैंद्य

सांस्कृतिक स्थिति दृ

इस जिले में विभिन्न जातियों व सम्प्रदायों के लोग रहते हैं जो जाति व्यवस्था के कारण एक दूसरे से भेदभाव करते रहते हैं जिससे वह आगे नही बढ़ पाते और जीवन भर प्राचीन परम्पराओं को लेकर जीवन यापन करते रहते हैंद्य इस कारण यहाँ की सांस्कृतिक स्थिति में भी सुधार होना एक चुनौती है क्योंकि ग्रामीण व पिछड़े लोग इसका विरोध नहीं कर पातेद्य यहाँ लोगों के जागरूक होने से कुछ बदलाव होना प्रारंभ हुए हैं जैसे ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों में पढाई को लेकर जागरूकता होना द्य

कृषि स्थिति दृ

जिले के किसान मुख्यतः परम्परागत विधियों से गन्ना, गेंहूँ, सरसों, धान ,चना , मसूर, आलू, मटर व सब्जी आदि की खेती करते हैंद्य नदी के किनारे बसे गांवो के कृषक बाढ़ की वजह से अत्यंत परेशान रहते हैं क्योंकि बाढ़ के कारण उनकी फसलें नष्ट हो जाती हैंद्य जिससे यहाँ के युवा खेती छोड़कर दुसरे शहरों में नौकरी की तलाश में प्रस्थान कर जाते हैंद्य

मैदानी क्षेत्रों के किसान अधिकांशतः पारंपरिक खेती करते हैं जिससे उन्हें अधिक लाभ नही मिल पाता हैद्य यहाँ के किसान अत्यधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करते हैं जिससे फसल लागत बढ़ जाती हैद्य वैज्ञानिक पद्धतियों का ज्ञान न होना भी एक चुनौती हैद्य अब वर्तमान समय में प्रगतिशील किसानों को देखकर खेती करने की तकनीकों में बदलाव आया है, किसान सब्जी की खेती में मल्चिंग का प्रयोग करने लगे जैसे टमाटर की खेती में बेड पर मल्चिंग कर खरपतवार से बचने तथा नमी के संरक्षण के लिए द्य

जिले में उपलब्ध प्राकृतिक जल संसाधन

इस जिले को पूर्वांचल का प्रवेश द्वार भी कहा जाता है तथा जिले के पूर्व में जिला अयोध्या ,पूर्वोत्तर जिला गोंडा और जिला बहराइच, उत्तर पश्चिम में जिला सीतापुर, पश्चिम में जिला लखनऊ, दक्षिण में रायबरेली और दक्षिण पूर्व में जिला अमेठी स्थित है। बाराबंकी में प्रवाहित हो रही घाघरा नदी बहराइच और गोंडा से बाराबंकी को अलग करने वाली उत्तर–पूर्वी सीमा बनाती है।

वर्तमान समय में भी, इस जिले में अधिकांश वनाच्छादित क्षेत्र असमान भू–भाग जिसमे अधिकांशता झंडियाँ पाई जाती हैं। जिले में वनों का कुल क्षेत्रफल 5.9 हेक्टेयर है जिनमे तहसील रामस्नेही घाट

में 29ः, तहसील फतेहपुर में 27ः और तहसील हैदरगढ़ में 15ः है अधिकांश वन जिले में प्रवाहित गोमती व कल्याणी नदी के तट पर हैंद्य जिनमे मुख्यतः शीशम, अर्जुन, सागौन, सुबबूल, नीम, बबूल, गुलमोहर, आम व जामुन आदि शामिल हैं।

इस जिले में घाघरा, गोमती, कल्याणी व रेठ नदी बहती हैं तथा 5 आर्द्र भूमि पाए जाते हैं। जिनका विवरण निम्नवत है –

घाघरा–

यह जिले की मुख्य नदी मानी जाती है तथा पहाड़ी नदी होने के कारण वर्ष भर पानी का मुख्य स्रोत्र रहती है जो उत्तरी सीमा से दक्षिण पूर्व में बहती है तहसील फतेहपुर व तहसील रामसनेहीघाट का कुछ भाग इसके तट पर पड़ते हैं। बहराइच और गोंडा से बाराबंकी को अलग करने वाली यह उत्तर पूर्वी सीमा बनाती है।यह नदी इन तहसीलों में बाढ़ का कारण भी बनती है जिससे जिले की लगभग 25000 से अधिक आबादी हर वर्ष प्रभावित होती है।

आकृति 3 – सरयू नदी का मानचित्र (स्रोत्र : www-mapsofindia-com)

गोमती–

यह नदी गोमत ताल (फुलहार झील) जो माधो टांडा, पीलीभीत उत्तर प्रदेश में है वहाँ के दलदली स्थान से निकलती है। जिसकी लम्बाई 960 किलोमीटर है। यह नदी सीतापुर, लखीमपुर, बाराबंकी, लखनऊ, सुल्तानपुर, जौनपुर आदि जिलों से होकर बहती है जो बाद में जाकर गंगा नदी में समाहित हो जाती है।

आकृति 2 – गोमती नदी का मानचित्र एवं चित्र

रेठ नदी – यह बाराबंकी जिले की एक छोटी सी नदी है जिसमे वर्षा के समय बहुत पानी रहता है तथा गर्मी के मौसम में यह सूख जाती है। प्रशासन द्वारा छोटी जलधारा का विशेष ध्यान न रखने के कारण यह गर्मी के मौसम में सूख जाती है। इस नदी में बाराबंकी शहर से निकला गन्दा नाले का पानी भी मिलता है जो इसके जल को दूषित कर देता है।

आकृति 3– वर्षा के मौसम में रेठ नदी का चित्र

भगहर झील–

आकृति 4 – भगहर झील का दृश्य

यह झील बाराबंकी जिले के रामनगर तहसील के सूरतगंज ब्लाक में स्थित है जो जिले की सबसे की बड़ी 185 एकड़ में फैली अर्धचंद्राकर झील हैद्य इस झील में जलकुम्भी बहुत अधिक मात्रा में पाई जाती हैद्य वर्तमान समय में झील को पर्यटन स्थल के रूप में विकसित किया गया है जहाँ पर झूले, कुर्सियां, वाच टावर, वन्य जीवों की जानकारी हेतु इंटरपरटेशन आदि की स्थापना की गयी है।

सलारपुर झील–

यह झील बाराबंकी के देवा विकास खंड के सलारपुर गाँव के पास है जो लगभग 51 हेक्टेयर में फैली है। जो कृषि क्षेत्रों व मानव बस्तियों से घिरी हुई है।

कोदवा झील–

यह झील बाराबंकी के देवा विकास खंड के बिसुनपुर गाँव के पास है जो लगभग 38 हेक्टेयर में फैली है। यह वर्ष के अधिकांश समय सूखी रहती है।

पुरैना झील–

यह झील बाराबंकी के देवा विकास खंड के कोटवा कला के पास स्थित है जो लगभग 311 हेक्टेयर में फैली है। यह एक मौसमी आद्र क्षेत्र है जो ग्राम समाज की संपत्ति होने के साथ–साथ कृषि क्षेत्र से घिरा हुआ है।

खेबली झील–

यह झील बाराबंकी के देवा विकास खंड के तकाजीपुर गाँव के पास है जो लगभग 450 हेक्टेयर में फैली है। यह एक मौसमी आद्र क्षेत्र है जो ग्राम समाज की संपत्ति होने के साथ–साथ कृषि क्षेत्र से घिरा हुआ है।

सन्दर्भ :–

www.mapsofindia.com

https://barabanki.nic.in/

kumar, d. (2018, january). The Gomati River: Lifeline of Central Ganga Plain. Retrieved from https://www.researchgate.net/publication/322206642: https://www.researchgate.net/publication/322206642_The_Gomati_River_Lifeline_of_Central_Ganga_Plain

Agri Vision

Peer Reviewed

Agricultural Powerhouse in the World

❑ **Ms. Akanksha Singh, Dr. R S Sengar*, Dr. Krishanu & Mr. Khushagra Yadav**

In the agriculture and food sector, our country has achieved sustainable food security due to its large population and has also earned the coveted title of the world's agricultural powerhouse. Beyond self-sufficiency, India is now a major exporter of agricultural products with a large share of rice, cotton, soybeans and meat exports. During her unprecedented Covid-19 pandemic, India has emerged as a global supplier of food and other agricultural products.

India is efficiently feeding and managing nearly 18% of the world population with only 2.4% and 4% of global land and water resources respectively. Consistent agricultural and land reforms, progressive and inclusive policies, and application of Science and Technology' at the ground level pushed-up productivity, production, and quality of agricultural products at a remarkable pace. Consequently, India is now the largest producer of pulses, jute, and milk, and ranks as the second-largest producer of rice, wheat, sugarcane, cotton, and groundnuts in the world. It also holds the second position in global fruit and vegetable production with a high rank in the production of mango, banana, papaya, and lemon.

With many feathers in its cap, the agriculture sector is now a proud entity with global acclaim, but the situation at the time of independence was quite deplorable. In addition to recurrent famines, the country lost major wheat and rice growing areas to Pakistan due to partition. In 1950-51, India produced around 50 million tonnes of food grains, which was not enough to feed the population of 350 million. To save its growing population from hunger, India resorted to the import of food grains which ultimately led to 'ship to mouth' living. Meanwhile, Indian leadership realising the critical importance of agriculture in the National Food Security Act (NFSA), proclaimed 'everything can wait, but not agriculture'. Hence, a slew of measures was initiated mainly to improve and extend irrigation facilities and bring in a 'scientific temper' in agriculture and allied sectors. Strengthening of the nationwide agricultural R&D network was fast-tracked, along with the creation of agricultural education facilities and extension services to farmers. However, in our land of traditional agriculture, it was first recognised as a 'subject of scientific improvement' in 1871 when British rulers established a 'Department of Revenue and Agriculture and Commerce'. Although the Department had a mandate for agricultural development, it mainly focused on revenue. In fact, British rulers did not intend to feed the famine-afflicted India, rather desired to direct agriculture towards the production of raw materials for British industries, especially for the textile industries of Manchester. However, some research institutions were established at a very slow pace, which later emerged as the light-house of agricultural development in independent India. The Imperial Bacteriological Laboratory (1889) was the earliest institution established in Pune, which later evolved as the prestigious ICAR-Indian Veterinary Research Institute with headquarter at Izatnagar, Bareilly, UP. Similarly, the Imperial Agricultural Research Institute established in 1905 in Pusa, Samastipur, later became the distinguished ICAR-Indian Agricultural Research Institute (IARI) at New Delhi; and the Imperial Institute of Animal Husbandry and Dairying established in 1923 in Bangalore, later grew to become the eminent National Dairy Research Institute in Karnal, Haryana.

The Royal Commission on Agriculture, appointed in 1926, recommended the setting up of an Imperial Council of Agricultural Research to endorse, direct, and organise agricultural veterinary research across the country. Thus, a central research coordination agency came up in 1929 which later evolved and was renamed the Indian Council of Agricultural Research (ICAR), soon after independence. Meanwhile, basic research continued at the provincial level under the respective departments of Agriculture and Animal Husbandry through the agricultural and veterinary colleges. Notable institutions under the provinces were the Sugarcane Breeding Station founded in 1912 in Coimbatore (which later became ICAR-Sugarcane Breeding Institute); and the Rice Research Station established in 1911. On the other hand, the Central Ministry of Food and Agriculture emphasised on commercial crops, and constituted semi-autonomous bodies or commodity committees to conduct research, specifically for improving the quality of the products. The first such committee of cotton was established in 1921, which led to the development of 70 improved varieties and considerably improved fibre quality. Subsequently, these committees were established for the overall improvement of lac, jute, sugarcane, coconut, tobacco, oilseeds, areca nut, cashew nut, and spices.

They established their own specific research

Department of Agriculture Biotechnology, college of Agriculture, Sardar Vallabh Bhai Patel University of Agriculture and Technology, Meerut-250110
Email : sengarbiotech7@gmail.com

institutions to conduct advanced research, such as Cotton Technology Research laboratory at Bombay; Indian Lac Research Institute at Ranchi; Jute Agricultural Research Laboratory at Dhaka (later relocated to Calcutta in 1947); Central Research Station at Kayankulam and Kasargod; Indian Institute of Sugarcane Research at Lucknow; and the Central Tobacco Research Institute at Rajahmundry.

On the agricultural education front, the first Agricultural School was opened at Saidapet, Chennai in 1868, which was later relocated to Coimbatore in 1906. Likewise, the Department for teaching agriculture in the College of Science at Pune (founded in 1989) was later developed into a separate college of agriculture in 1907. A series of agricultural colleges were established at Kanpur, Sabour, Nagpur, and Lyallpur (now in Pakistan) from 1901 to 1905. These colleges were mainly devoted to teaching, but research activities could not be carried out due to the lack of scientific and technical manpower and facilities.

Towards Self-Reliance

After independence, Indian policy planners accorded top priority to agricultural development with the ultimate goal to make the country self-reliant in staple foodgrains, i.e., wheat and rice. Accordingly, several specific initiatives were taken in the first Five Year Plan to uplift agricultural growth along several verticals. Major irrigation projects were launched and land titles were given to actual cultivators under land reforms. Co-operative credit institutions got a boost due to better financing and an initiative was taken up to bring institutional changes in the agriculture support system. Consequently, India harvested nearly 70 million tonnes of foodgrains (wheat, rice, coarse cereals, and pulses) during 1956-57, but due to the growing population, it could not lessen the country's reliance on imports. In the Second Five Year Plan, agriculture was shifted downwards in the priority list to accommodate industrial development for boosting the economy. During the 1960s, India continued with the escalation of imports, mainly from the USA under the PL-480 scheme. In and around 1965, the country suffered three major setbacks on the food front- severe drought, war with Pakistan, and imposition of strict curbs by the USA on delivery of wheat. India somehow managed to avoid the severe trap of famine and hunger by importing an all-time high, 10 million tonnes of foodgrains in 1966 from various sources. In the Third Five Year Plan, the Government made a strong commitment to making the country self-reliant in foodgrains production, mainly through scientific and technological interventions, and implementation of conductive policies at farm-level. The Government of India permitted trials of Mexican wheat varieties in fields. These varieties, developed by renowned American Agronomist, Dr Norman E Borlaug (1914 to 2019), were dwarf/semi-dwarf, rust-resistant, and had already shown potential to enhance yield manifold. Over 1,000 trials/ demonstrations were conducted in farmers' fields across the north Indian wheat belt under the mentorship of eminent Plant Geneticist Dr M S Swaminathan. Farmers successfully harvested 4-5 tonnes per hectare yield in contrast to earlier one tonne hectare with Indian varieties. This was a quantum jump never imagined earlier. The clamour for new high-yielding seeds grew rapidly across wheat-growing areas due to the excellent performance of new wheat varieties and personal motivation to farmers by the great duo- Dr Borlaug and Dr Swaminathan. Agriculture departments and R&D institutions facilitated a regular supply of quality seeds, fertilisers, machinery, irrigation facilities, and more importantly, scientific advisories. In 1968, our nation reaped a bumper harvest of nearly 17 million tonnes of wheat that was just 11 million tonnes in 1966. This was the biggest leap of wheat production ever recorded globally. This spectacular achievement was recognised as 'Green Revolution' over the world.

Acting almost on a similar pattern, the Government of India indented seeds of dwarf and high-yielding rice variety IR-8, developed by the International Rice Research Institute at Manila, Philippines. Its seeds were distributed among farmers, mainly in the southern and eastern regions. In comparison to merely 2 tonnes per hectare yield from local varieties, farmers could reap a bumper harvest of 6-7 tonnes per hectare, and that too in a short duration of only 105 days. Farmers adopted this variety widely, and Indian rice breeders developed a series of 'IR' varieties with a yield potential up to 10 tonnes per hectare. Thus, an era of high-yielding varieties of crops began with new dimensions such as multiple cropping, a package of good agricultural practices, an extension of modern farm practices and irrigation facilities, and a newer approach towards post-harvest technologies. During the post-Green Revolution period, policy planners focussed more on research, extension, education, input supply, credit support, marketing, price support, and institution building. The new strategy has enabled the country to increase the production of foodgrains by 5.6 times, horticultural crops by 10.5 times, fish by 16.8 times, milk by 10.4 times, and eggs by 52.9 times from 1950-51

to 2017-18. As per fourth advance estimates, for 2020-21, total foodgrain production in the country is estimated at a record 308.65 million tonnes. Horticulture production is expected to reach a record level of 329.86 million tonnes in 2020-21 (2nd advance estimates). Thus, India has travelled a long journey from being a famine-afflicted and food-scarce nation to a proud food- surplus nation.

Building Networks

During the 1950s and 1960s, the Government of India decided to build a public agricultural research system with ICAR as an apex body to plan, coordinate, and undertake research across commodities. Animal husbandry, fisheries, aquaculture, and many other enterprises integral to agriculture, were also brought under the umbrella of ICAR. Now, the system has grown into one of the world's largest networks of agricultural R&D, education, and extension institutions. Currently, ICAR is managing R&D activities in 102 institutions that include 65 research institutions, four deemed universities with research facilities, 14 National Research Centres, six National Bureaux, and 13 Project Directorates. ICAR is also playing a major role in the promotion of excellence in higher agricultural education by mentoring and providing financial support to 71 State cultivators under Agricultural Universities. In addition to research and education, ICAR also supports technology assessment, demonstration, capacity and Co-operative got a boost financing and an taken up to bring changes in the support system. development activities through a network of 11 Agricultural Technology Application Research Institutions and 721 Krishi Vigyan Kendras (KVKs) across the country. KVKs are small entities at the district level that perform frontline extension activities and are responsible for the implementation of 'Lab to Land' programmes. The first KVK was opened in Pondicherry in 1974 on the recommendation of an expert committee (1973), constituted to suggest ways for the institutionalisation of agricultural extension at a national level.

To strengthen the agricultural research network, it was imperative to develop a network for higher education in agriculture and allied sciences. In 1948, the country has only 17 agriculture colleges that were working under the administrative control of agriculture departments of respective States. During 1948-49, the then Chairman of the University Grants Commission Dr Sarvepalli Radhakrishnan advocated opening rural universities for scientific training and skilling of rural youth. Pandit Govind Ballabh Pant, the then Chief Minister of Uttar Pradesh, acted on his call and deputed an expert committee to the USA to study the working of Land-Grants Universities and recommended a model for agricultural universities in India. Subsequently, acting on the recommendations of the committee, the Government of Uttar Pradesh decided to establish a large and integrated State Agricultural University in Rudrapur. The huge campus was inaugurated on 17 November 1960, by the then Prime Minister Pandit Jawaharlal Nehru as 'Uttar Pradesh Agricultural University'. This was the first agricultural university of India that laid a strong foundation of higher agricultural education with excellence. Later, it was renamed Govind Ballabh Pant University of Agriculture & Technology, and also played an important role in the success of the Green Revolution. During the Fourth Five Year Plan (196065), seven State Agricultural Universities (SAUs) were established in Uttar Pradesh, Orissa, Rajasthan, Punjab, Andhra Pradesh, Madhya Pradesh, and Karnataka, besides higher education, the wide network of SAUS is currently addressing State-specific research and extension needs in close contact with farmer communities. Meanwhile, ICAR was also reorganised and revamped in 1966 to address emerging challenges at the national level. Administratively, it became an autonomous body under the Government of India, and all research institutions/stations under various central commodity committees were brought under its umbrella. In 1965, ICAR initiated a novel concept of 'All India Coordinated Research Projects' (AICRPs) with a specific mandate- 'To conduct operational research and multi-location trials on developed technologies to identify technical, financial, managerial, and social constraints for better market acceptability 10 technologies'. Currently, 60 AICRPs are dedicated and functioning towards the improvement of various crops, livestock species, fisheries, and many other commodities importance.

Creating Milestones

Since the post-Green Revolution period, agricultural R&D mainly focused its efforts on issues that were critical to sustaining food security and efficient use of natural resources. In attempting so, an array of improved varieties of various crops were developed with desirable characteristics, such as high-yield potential, resistance to pests and diseases, tolerance to biotic and abiotic stresses, and better nutritional qualities. Some landmark varieties

with far-reaching impacts were developed under the leadership of ICAR, such as 'HD' series of wheat varieties developed by IARI, New Delhi These varieties are high-yielding, rust-resistant, and scientists also added the attribute of 'climate adaptability' in the latest varieties. The 'HD' series of wheat varieties now covers nearly 140 lakh hectare area out of 317 lakh hectare of wheat growing area in the country. Per hectare productivity of wheat has now sky-rocketed to 3,424 kg, which was just 669 kg during 1946-47 The nation harvested a record 110 million tonnes of wheat during 2020-21 (4th advance estimate). In rice, other than high-yielding, specific varieties were developed to perform well under drought or water-logged conditions. However, Basmati rice varieties, developed by IARI, won worldwide acclaim and popularity due to their exquisite aroma, flavour, and texture. The Basmati variety 'Pusa-1121' has earned the unique distinction of being the longest grain' variety in the world with an exceptionally high cooked kernel elongation ratio of 2.5 and volume expansion more than four times. India could earn equivalent to Rs 33,000 crore of foreign exchange by exporting basmati rice during 2018-19. Backed by S&T interventions and improved varieties, India harvested a record 122.27 million tonnes of rice during 2020-21 (4th advance estimate).

To attain self-reliance in oilseeds production, agricultural R&D was oriented towards increasing per hectare productivity by various S&T interventions. The recent introduction of exotic oil palm as an oilseed crop by developing production technologies suitable to Indian conditions has shown promise. Earlier. the introduction and popularisation of soybean in suitable regions have successfully contributed to the kitty of edible oils. Due to consistent efforts, oilseed production in the country has reached a record of 36.10 million tonnes during 2020-21 (4 advance estimate). Special intervention made to raise the production and productivity of pulses has led to record production of nearly 26 million tonnes in 2020-21 (4th advance estimate). A mission mode approach was adopted to raise the production of horticultural crops mainly by the introduction of new varieties, improved package of agricultural practices, expansion of the area, and regeneration of old/unproductive orchards. Currently, India ranks number one in the productivity of banana, grapes, papaya, cassava, and green peas Total horticultural production is estimated to be 329.86 million tonnes (highest ever) during 2020-21 (2nd advance estimate). A significant increase in production is registered over the previous year in nearly all categories of horticultural crops, such as fruits. vegetables, plantation crops, spices, and medicinal and aromatic plants. In the latest development, scientists have developed bio-fortified varieties of some major crops, which are 1.5 to 3.0 times more nutritious than the traditional varieties. Recently, the Prime Minister dedicated 17 such varieties of eight crops to the nation.

During the 1950s and 1960s, just like food grains, India depended heavily on the import of milk to meet national demand. To attain self-reliance, an ambitious programme, called 'Operation Flood', was launched in 1970 that addressed production and productivity issues with major reforms in the marketing of milk and milk products. Soon. the efforts paid dividends and in 1998, India became the largest producer of milk in the world, surpassing the USA. The transformation, widely known as 'White Revolution', is still making waves with current milk production of nearly 200 million tonnes and per capita milk availability crossing 400 gm per day. Advances made in animal breeding, reproduction, health, and nutrition have made seminal contributions in sustaining the white revolution. Similarly, the targeted programme of Blue Revolution transformed the fisheries sector with an all-time high production of nearly 14.16 million tonnes between 2019 and 2020. On the global map, India is the second-largest-aquaculture-producing country and the third-largest fish producer.

Way Forward

Despite splendid growth, Indian agriculture is facing some major challenges such as small and fragmented land holdings, post-harvest losses, and poor market infrastructure Recently, the Government has launched several new schemes and programmes to address such issues by adequate fund allocation and devising innovative measures that include cutting-edge S&T interventions. For example, Artificial Intelligence and Machine learning are paying the way for intelligent farming, and the use of IoT-enabled sensors to prevent excessive use of harmful chemicals. Specialised drones and robots are poised to revolutionise modern farming. Drones, aerial as well as ground and satellite imagery based, are helping farmers to remotely monitor crops, diagnose issues, and also make informed decisions regarding crop protection and nutrition. Digital transformation is changing the face of agriculture and farmers by providing the right knowledge, resources, and technology on a real-time basis. Online marketplaces (e-Mandis) and regular market updates are empowering farmers to maximise their income. Recent thrust and support to agri-startups are helping the promotion of agriculture as an enterprise with attractive returns However, the future of Indian agriculture lies in the development of sustainable agriculture, which means development policies related to agriculture and farmers must include conservation of natural resources and create an enabling policy environment for future agriculture Generation and distribution of appropriate technologies, improvement in support services, and enhancement in physical infrastructure are other issues that need immediate attention. Integration of resources. technologies, knowledge, and policies are paving the way for better agriculture and a brighter tomorrow.

Cyber world

Peer Reviewed

The Dark Side of Social Media: Cyberbullying in India

❑ Dr. Dhirendra Pandey & Mr. Manish Joshi

Cyberbullying is prevalent issues that have become increasingly common in India. With the rise of social media platforms and the widespread availability of digital communication tools, online harassment has become easier than ever before. What cyberbullying particularly insidious is the anonymity and distance afforded by the digital medium. Cyberbullies can hide behind fake identities or screen names, making it difficult for victims to identify their harassers and seek legal or social recourse.

The impact of cyberbullying on the mental health and well-being of victims is severe. Studies have shown that victims of online harassment are more likely to experience symptoms of anxiety, depression, and post-traumatic stress disorder than those who have not been harassed. Moreover, online harassment can have a ripple effect, spreading fear and intolerance throughout society. The psychological harm inflicted on individuals can spill over to affect their families, friends, and even colleagues.

In India, cyberbullying take various forms, from the dissemination of hate speech to the posting of sexually explicit images without consent. Women and marginalized groups are particularly vulnerable to online harassment, with cyberbullies often targeting them based on their gender, caste, religion, race, or sexual orientation. The anonymity of the online medium allows perpetrators to perpetuate stereotypes and perpetrate hateful acts without fear of repercussions.

Given the severity and pervasiveness of cyberbullying in India, it is crucial to address the issue through a comprehensive and multi-pronged approach. This requires a concerted effort from all stakeholders, including the government, civil society, media, and online platforms. Only by working together can we hope to create a safer and more tolerant online environment that respects the dignity and rights of all individuals.

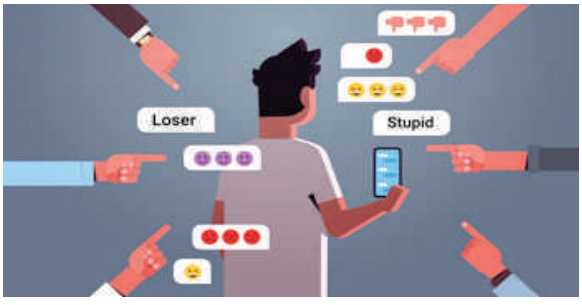

II. How Cyberbullying manifest in India

According to McAfee's Cyberbullying Pulse Survey reveals that Indian children are among the most cyberbullied in the world. As per the report, 85% of Indian children reported being cyberbullied as well as having cyberbullied someone else at rates well over twice the international average. According to Indian parents, 42% of children have been the target of racist cyberbullying, 14% higher than the rest of the world at 28%. Extreme forms of cyberbullying reported besides racism include trolling (36%), personal attacks (29%), sexual harassment (30%), threat of personal harm (28%) and doxing (23%), all of these at almost double the global average. The top three forms of cyberbullying reported in India were spreading false rumours at 39%, being excluded from groups/ conversations at 35% and name calling at 34%.

https://www.mcafee.com/blogs/family-safety/more-dangers-of-cyberbullying-emerge-our-latest-connected-family-report/

https://www.mcafee.com/content/dam/consumer/en-in/docs/fact-sheets/fs-cyberbullying-in-plain-sight-2022-india.pdf

1. Social Media Trolling: Social media trolling is a common form of cyberbullying in India, with individuals, public figures, and even brands being targeted by trolls. For example, in 2020, actor Sonakshi Sinha received numerous abusive comments and threats on her social media handles after she spoke out against the trolling of fellow actor Sushant Singh Rajput. Similarly, Indian cricketer Mohammed Shami was trolled online after he posted a photograph of his wife in a sleeveless gown.

https://timesofindia.indiatimes.com/entertainment/hindi/bollywood/news/sonakshi-sinha-slams-trolls-after-deactivating-twitter-account-ive-cut-the-direct-source-of-insult-and-abuse-in-my-life/articleshow/76502431.cms

https://www.hindustantimes.com/cricket/mohammed-shami-hits-back-after-family-pictures-draw-flak-for-being-unislamic/story-oz0x153O6gHf4gFXq9gzSN.html

2. Online Harassment of Women: Online harassment of women is another prevalent form of cyberbullying in India. Women are often targeted with abusive and sexist comments, threats of violence, and sexual harassment online. In 2018, journalist Rana Ayyub received several

Associate Professor, Head Department of Information Technology, BBAU, Lucknow.
Research Scholar, Department of Information Technology, BBAU, Lucknow. 226025

death and rape threats on social media after she published a book critical of the Indian government. Similarly, actor and activist Swara Bhaskar has been subjected to online abuse and trolling for her political views and activism.

https://www.cbc.ca/radio/thecurrent/rana-ayyub-india-press-freedom-1.6710646

https://theprint.in/opinion/swara-bhasker-says-her-politics-has-made-her-a-nuisance-in-bollywood-but-she-wont-stop-now/234077/

3. Cyberbullying in Schools: Cyberbullying is also prevalent among school children in India. According to a survey conducted by the National Council of Educational Research and Training (NCERT), nearly one-third of students in India reported being victims of cyberbullying. Students are often subjected to harassment and threats on social media, messaging apps, and online gaming platforms. In some cases, cyberbullying has even led to suicide among school children.

4. Revenge Porn Revenge porn is another form of cyberbullying that has become increasingly common in India. In 2019, a 21-year-old woman from Delhi committed suicide after her ex-boyfriend shared her nude photographs on social media. The victim had filed a police complaint against her ex-boyfriend, but no action was taken, leading to the tragic incident, in another case woman alleged that someone hacked into her WhatsApp account and threatened to post photographs of her on social media attempts suicide. In 2018, a woman in her mid-thirties committed suicide in West Bengal's East after four individuals, including three high school students, allegedly uploaded nude photographs of her on the social media.

https://indianexpress.com/article/cities/delhi/blackmailed-by-hacker-woman-attempts-suicide-5085146/

https://www.hindustantimes.com/kolkata/bengal-woman-commits-suicide-after-school-students-post-nude-photos-online/story-7UPwPHMgNN2NgcFJeRYmtM.html?utm_source=inshorts&utm_medium=referral&utm_campaign=fullarticle

5. Online Impersonation: Online impersonation is another form of cyberbullying that has caused significant harm to individuals and businesses in India. In 2022, a group of fraudsters created fake Facebook profiles of several Indian army officers and used them to dupe unsuspecting victims of money. Similarly, several celebrities and politicians have had their identities stolen by trolls and impersonators on social media.

https://timesofindia.indiatimes.com/city/rajkot/fraudsters-pose-as-army-officers-dupe-unsuspecting-citizens-online/articleshow/90528773.cms

6. Fake News and Propaganda Fake news: These are also forms of cyberbullying that are prevalent in India. Fake news and propaganda are often used to spread false information, create fear and panic, and incite hatred and violence against certain groups. For example in 2018 at least 25 people have been killed in incidents of mob violence triggered by rumors circulated on WhatsApp.

https://www.dw.com/en/india-engineer-latest-victim-of-mob-lynchings-fueled-by-whatsapp-rumors/a-44679902

III. Factors Contributing to Cyberbullying in India

There are several factors that contribute to cyberbullying in India. Some of these factors are unique to India, while others are common across the world.

1. Cultural factors: India is a culturally diverse country with a rich history and heritage. However, there are certain

cultural norms and practices that can contribute to cyberbullying. For instance, the traditional Indian culture places a lot of emphasis on hierarchy, respect for elders, and deference to authority figures. This can sometimes result in a lack of respect for people who hold different opinions or are from different backgrounds. Additionally, there is a tendency to take offense at even minor slights, which can lead to the use of abusive language and insults.

2.Political factors: India has a complex political landscape with a wide range of political parties, ideologies, and movements. Political polarization can often spill over into online discussions, leading to the use of abusive language and personal attacks. Additionally, there have been instances where political parties or individuals have used social media to spread fake news and misinformation, which can contribute to cyberbullying.

3. Social media platforms: Social media platforms have become an integral part of our lives, and they offer us a lot of opportunities to connect with others and share our opinions. However, these platforms can also be a breeding ground for cyberbullying. Social media algorithms prioritize engagement, which means that content that generates a lot of reactions, whether positive or negative, is more likely to be promoted. This can encourage people to post provocative content or engage in online harassment.

Besides these there are several other factors which also contribute to cyberbullying

1. Anonymity: One of the key factors contributing to cyberbullying in India is anonymity. Social media platforms and messaging apps allow users to create fake or anonymous accounts, making it difficult to identify the perpetrators of online abuse. This anonymity provides a sense of security to the cyberbullies, leading them to engage in aggressive and abusive behavior online.

2. Group mentality: Another factor contributing to cyberbullying in India is the group mentality that exists on social media. Many people feel emboldened to engage in abusive behavior online when they are part of a larger group. This group mentality can lead to a mob-like behavior that is difficult to control.

3. Gender-based violence: Women in India are particularly vulnerable to online abuse, including trolling and cyberbullying. Women who speak out against issues such as sexual harassment or gender inequality are often targeted by trolls who use misogynistic language and threats to intimidate and silence them.

4. Lack of legal framework: Finally, the lack of a comprehensive legal framework to deal with online abuse is a major factor contributing to cyberbullying in India. While there are laws that prohibit online harassment, these laws are often ineffective and not enforced properly. The lack of a strong legal framework makes it difficult for victims to seek justice and for law enforcement agencies to take action against the perpetrators of online abuse.

5. Lack of awareness: Despite the growing prevalence of cyberbullying, there is still a lack of awareness about the negative impact these behaviors can have on individuals and society as a whole. Many people view trolling and cyberbullying as harmless fun or a way to vent their frustrations. Additionally, there is a lack of awareness about the legal consequences of these behaviors, which can further contribute to their prevalence.

6. Technology: Technology has made it easier than ever to engage in trolling and cyberbullying. With the anonymity afforded by social media platforms and messaging apps, it is easy for individuals to engage in abusive behavior without fear of consequences. Additionally, advances in technology have made it easier to create and share fake news and misinformation, which can contribute to the spread of cyberbullying.

IV. Effects of Cyberbullying in India

Cyberbullying can have a range of negative effects on individuals and society as a whole in India. Some of the most significant effects include:

1. Psychological effects on victims: Cyberbullying can have serious psychological effects on victims. Victims of Cyberbullying may experience anxiety, depression, low self-esteem, and feelings of helplessness and isolation. In severe cases, cyberbullying can lead to suicide or self-harm.

2. Social effects on victims: Cyberbullying can also have negative social effects on victims. Victims may experience social exclusion, rejection, and stigmatization. They may also find it difficult to form and maintain relationships, both online and offline.

3. Impact on mental health: Cyberbullying can have a significant impact on mental health in India. Studies have shown that individuals who have experienced cyberbullying are at increased risk of developing mental health problems such as anxiety, depression, and post-traumatic stress disorder (PTSD).

4. Effects on society as a whole: Cyberbullying can also

have broader societal effects in India. They can contribute to the spread of hate speech, fake news, and misinformation, which can further polarize society and undermine democratic institutions. Additionally, trolling and cyberbullying can lead to a breakdown in social norms and values, as well as a loss of trust in online interactions and institutions.

Overall, the effects of cyberbullying in India are far-reaching and can have significant long-term consequences for individuals and society as a whole. It is important for individuals, communities, and institutions to take steps to prevent and address these behaviors, and to provide support for those who have been impacted by them. This may involve increased education and awareness-raising, stronger legal and technological solutions, and a greater focus on mental health and wellbeing.

V. Legal and Regulatory Frameworks for Tackling Cyberbullying in India

Cyberbullying is a serious issues that require a robust legal and regulatory framework to prevent and address them in India. Here's an overview of the current legal framework for tackling trolling and cyberbullying in India, along with an analysis of its strengths and weaknesses, and recommendations for improvement.

Overview of the current legal framework:

The Information Technology Act, 2000 (IT Act) is the primary legislation governing the use of the internet and technology in India. Under the IT Act, cyberbullying is punishable offenses. Section 66A of the IT Act, which criminalized offensive messages sent using a computer or communication device, was struck down by the Supreme Court of India in 2015. However, several other sections of the IT Act, such as Section 66E which criminalizes the capturing or circulation of private area of a person without his or her consent, Section 67, which criminalizes the publication or transmission of obscene material, and Section 66D, which criminalizes cheating by impersonation using a computer resource, can be used to prosecute cases of trolling and cyberbullying. Additionally, the Indian Penal Code (IPC) includes several provisions that can be used to prosecute cases of cyberbullying, such as Section 509, which criminalizes the use of words, gestures, or acts intended to insult the modesty of a woman.

Analysis of the strengths and weaknesses of the legal framework:

The legal framework for tackling trolling and cyberbullying in India has several strengths, including the fact that there are several provisions under the IT Act and IPC that can be used to prosecute offenders. However, there are also several weaknesses. For instance, the lack of a specific law to deal with cyberbullying means that the legal framework is fragmented and unclear. Additionally, there is a lack of awareness among law enforcement agencies about the nuances of online harassment, which can make it difficult to investigate and prosecute cases. Furthermore, the absence of clear guidelines and protocols for social media platforms to remove or block offensive content makes it difficult to regulate online harassment effectively.

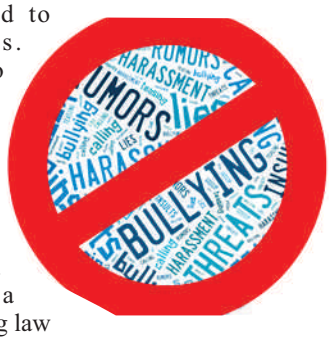

Recommendations for improving the legal and regulatory framework:

To improve the legal and regulatory framework for tackling cyberbullying in India, several steps need to be taken. First and foremost, there is a need for a comprehensive and coherent legal framework that specifically deals with cyberbullying. This can include the establishment of a separate law enforcement agency that specializes in investigating online harassment cases. Additionally, there is a need for greater awareness and training among law enforcement agencies and the judiciary about the nuances of online harassment. Clear guidelines and protocols for social media platforms to remove or block offensive content need to be established, and there should be greater accountability for these platforms to ensure that they are following these guidelines. Finally, there is a need for greater public awareness and education about the negative impact of cyberbullying, as well as the legal consequences of engaging in these behaviors. This can help create a culture of responsible online behavior and reduce the prevalence of online harassment in India.

PRAHLAD KISHORE SETH: A TRIBUTE

(15 June, 1943 – 22, December, 2022)

Professor Prahlad Kishore Seth was born on June 15, 1943 in Lakhimpur-Kheri, a small town in Uttar Pradesh. His father, Shri Gur Prasad Seth was the Additional Cane Commissioner, U.P. - Sugarcane and marketing and his mother Smt. Radha Rani Seth was a home maker. He obtained his B.Sc. (Chemistry, Botany & Zoology) and M.Sc. (Biochemistry) degrees from the University of Lucknow in 1960 and 1962 respectively. He then qualified the CSIR-Junior Research Fellowship and joined the Department of Pharmacology, King George's Medical College, Lucknow for his PhD under the supervision of Professor S.S. Parmar in 1963. His PhD (Chemistry) was awarded by the University of Lucknow in 1967. Professor Seth got married to Ms Manju Kapoor from Kanpur in 1967.

After the award of PhD degree in 1967, Dr Seth moved to The Chicago Medical School, USA, as a Faculty Research Associate (1967-70) and later served in the same institution as Assistant Professor (1970-71). Despite a short stint at the Chicago Medical School, he was recipient of Board of Trustees Research Award for Meritorious Research and Outstanding Contributions to Medical Knowledge, 1969 and the prestigious Schweppe Foundation Fellowship Award (Career Development Award) for Three Years, 1969. During this short period in USA, Dr Seth co-authored two research papers in the journal Nature (1969 and 1970) and one in Science (1971), among several others.

He was appointed Scientist-C through an open selection in 1971 at CSIR-Industrial Toxicology Research Centre (CSIR-ITRC), Lucknow (now CSIR-Indian Institute of Toxicology Research). Dr Seth was one of the few scientists to join CSIR-ITRC in its formative years. He served in various scientific positions before being appointed as the Director, CSIR-ITRC in 1997. He served as Director till 2003, and later as Director-Grade Scientist till 2005. During his tenure at CSIR-ITRC, he was a Visiting Senior WHO Fellow, U.K. and Europe (1979). He also served as a Visiting Scientist, Laboratory of Behavioural and Neurological Toxicology, National Institute of Environmental Health Sciences (NIEHS), Research Triangle Park, USA, under the aegis of Fogarty International Visiting Programme of National Institutes of Health, USA (1979-80). He was also a Visiting Professor, Department of Physiology, University of North Dakota, USA (1981, 1982). He had the unique distinction of being invited five times as a Visiting Scientist between 1980-1988 to the US-Food and Drug Administration, Division of Pharmacology and Toxicology, USA. He was invited as a Visiting Scientist to the University of Texas Medical Branch at Galveston, Texas, USA in 1994 and Visiting Professor, Department of Medicine, Louisiana State University Medical Centre, New Orleans, LA, USA in 1995. Dr Seth was Adjunct Professor, Department of Elementology and Toxicology, Jamia Hamdard University, New Delhi, since 2001 and Honorary Emeritus Professor, Department of Biochemistry, University of Lucknow since 2004. Professor P.K. Seth was the Founding CEO, Biotech Park Lucknow and served from 2005-2015. Later, he was Senior Advisor, Biotech Park from 2015-2016.

Prof. Seth provided outstanding committed and continued leadership in the field of toxicology and environmental health. His contributions to the growth of toxicology which was in infancy when he joined IITR in 1971 after his return from USA, include starting of a Biochemical Pharmacology and Chemical Toxicology group, introducing mechanistic approaches to understand the toxic effects of chemicals and how they impact health, establishing national and international collaboration, formulating and implementing mega network projects and developing human resource through outstanding mentorship. His leadership in toxicology and environmental health received national and international recognition. Professor P.K. Seth was successful to putting Indian Toxicology on the world map by organizing several programs with international agencies like WHO, US FDA, US EPA, DAAD, IUPHAR and IUTOX. Professor Seth was among the few founding members of the Indian Academy of Neurosciences, a common platform for interaction of neuroscientists in India.

Professor Seth was invited as a selection committee expert for PHSS Foundation Awards in 2012, appreciated the vision and joined the foundation as its life member. He was elected as president PHSS Foundation for the consequently three terms and led the society with his visionary leadership and valuable inputs consistently till his heavenly abode. The Foundation has announced a biennial PK Seth Memorial Award for the significant contributors in the field of environmental management to recognised his contributions for the foundation. We the members of PHSS Foundation pay our homage to him remembering his contributions.

(This Obituary note is a summarized version of an article provided by his one of the students Professor Alok Dhawan)

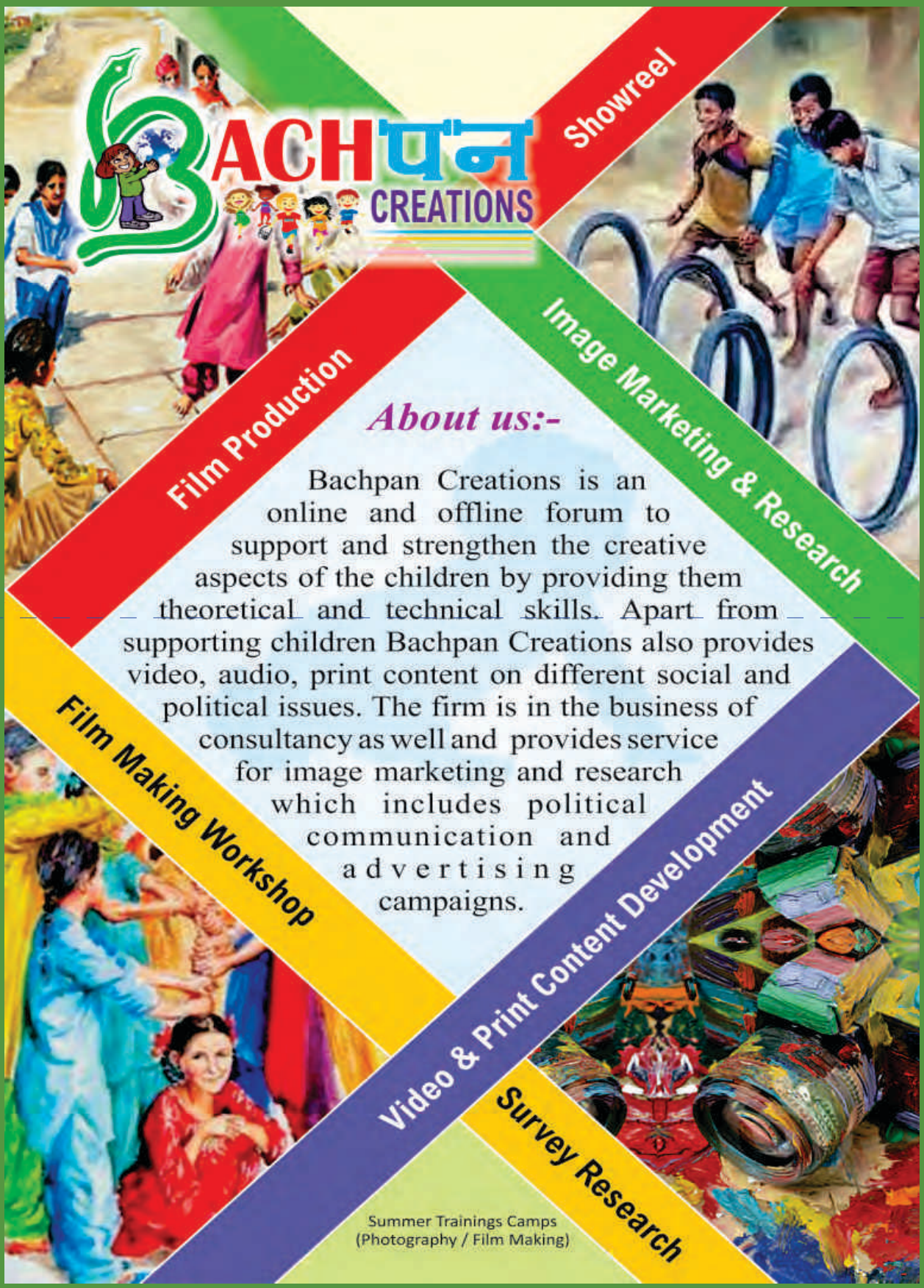

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें

हेड आफिस: ई–998, रत्नाकर खण्ड, शारदा नगर, रायबरेली रोड, लखनऊ

E-mail: bachpanexpress@gmail.com, www.bachpanexpress.com, Mob.: 9198255566, 9580803904